अप्रैल
१९४४
दीदी
वार्षिक
एक प्रति
स्त्रियों और लड़कियों के लि

भारतीय स्त्रियों और कन्याओं की सबसे अच्छी और सबसे सस्ती सचित्र मासिक पत्रिका

बिहार, बीकानेर, जोधपुर, कोटा, ग्वालियर, यू० पी० की सरकारों द्वारा कन्या-शालाओं के लिये स्वीकृत।

वर्ष ५] इलाहाबाद, अप्रैल, १९४४ [संख्या ४

बन्धन तोड़ो

लेखक, श्री स्वराज्यप्रसाद त्रिवेदी बी० ए०

नारी इस बन्धन को तोड़ो

नर बाँध चुका है युग युग से, अब तुम इस बन्धन को तोड़ो।

वर्षों से लौह शृङ्खला यह,
कर रही तुम्हें बेबस नारी,
तुम पराधीन सी, लज्जित सी,
खो चुकी शक्ति अपनी सारी।

यह मोह भला क्यों बन्धन से इस दैन्य हीनता को छोड़ो।

बोलो, "अब हमें न बाँधेगी,
पापी समाज की दीवारें,
कुछ कर न सकेंगी अब अपना,
ये दण्ड रूपिणी तलवारें—"

समवेत शक्ति से जाग्रत हो, इस निष्क्रियता से मुख मोड़ो।

तुम सबल और तुम सक्षम हो
तुम शक्तिदायिनी माता हो,
तुमसे ही तन-जीवन पाकर,
नर अरे तुम्हारा त्राता हो।

फिर माँ को बन्धन में बाँधे ? माँ तुम न बँधो बन्धन तोड़ो।

नारी इस बन्धन को तोड़ो।

दीपक से—

लेखक, श्री दीनदयाल उपध्याय "बालार्क"

तू किसे याद कर जलता है ?
रोने में कह क्या मिलता है ?
क्यों याद किसी की आती है ?
औ' जान हृदय से जाती है ?

मत व्याकुल हो, जो होना है—
वह तो होकर ही रहता है।

यदि सत्य-प्रेम तेरा होगा,
तू उसका, वह तेरा होगा,
'लौ' लगी रहे तेरी ऐसी,
तो इष्ट तुझे मिल सकता है।

गिरता है जब पतंग तुझ पर,
कहता—"जलता हूँ मैं तुझ पर"
पर सच तो है दीपक ! पहले—
उससे तू ही तो जलता है।
क्या जलना तुझे न खलता है ?

——

माता कस्तूर बा गाँधी

लेखक, श्रीनाथसिंह

सीता सावित्री दमयन्ती और गांधारी की भाँति माता कस्तूर बा गाँधी भी हम भारतवासियों के हृदयों में अपनी याद छोड़ गई हैं। उनका नश्वर शरीर आज हमारे बीच में नहीं है परन्तु उनकी कहानी अमर रहेगी।

सीता, सावित्री, दमयन्ती और गांधारी की ही भाँति माता कस्तूर बा को भी कड़ी परीक्षा देनी पड़ी है। अंतर केवल इतना ही है कि इस परीक्षा में माता कस्तूर बा को अपने प्रियजन के वियोग के साथ साथ अपने प्राणों की भी बलि देनी पड़ी। उनकी टेक रह गई। वे इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुईं।

उन्होंने कोई महत्वकांक्षा लेकर जीवन क्षेत्र में पदार्पण नहीं किया था। वे बहुत पढ़ी लिखी भी नहीं थीं। पूरे १३ वर्ष की भी नहीं हुई थीं कि वे एक आदर्शवादी पति को सौंप दी गईं। प्राचीन भारत की देवियों की कहानियाँ उन्होंने सुनी थीं। वही वे बनना चाहती थीं। वे अपने सास ससुर की सेवा करना चाहती थीं, अपने पति को सुख पहुँचाना चाहती थीं। अपनी गोदी के लालों को सँभाल कर रखना चाहती थीं। बस, इतनी सी उनकी साध थी परन्तु इस साध को पूरी करने के लिए उन्हें काँटों के बन से निकलना पड़ा है, आग के तूफानों के बीच में कूदना पड़ा है और उसी में उनके जीवन का अन्त भी हो गया। यह कैसी दुखान्त कहानी है कि उनकी यह छोटी सी साध पूरी न हो सकी।

उनकी कहानी एक मूक तपस्विनी की कहानी है। उनका सबसे बड़ा सौभाग्य या दुर्भाग्य यही था कि वे एक महापुरुष की पत्नी थीं। इसका उन्हें जो मूल्य चुकाना पड़ा है उसका अनुमान करना भी सम्भव नहीं है। उन्होंने इच्छा से या अनिच्छा से पति का अनुगमन किया, उफ नहीं किया, धैर्य नहीं छोड़ा। यह न सोचा कि क्या उचित है, क्या अनुचित? सिर्फ यह देखा कि पति क्या चाहते हैं और वही किया।

महात्मा गाँधी ने अपनी आत्म कथा में उनकी कहानी लिखी है। उसको पढ़ने से जान पड़ता है कि महात्माजी ने उनके साथ कितना कठोर व्यवहार किया है। परन्तु बा ने सब सहप सहा। जिस तरह गाँधी जी ने नचाया उसी तरह वे नाचीं। गाँधी जी अपने प्रयोगों में सफल रहे हैं या असफल यह तो आने वाला संसार बताएगा परन्तु बा कसौटी पर खरी उतरी हैं, इसको कौन अस्वीकार कर सकता है। उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास की इस चौपाई को सत्य करके दिखा दिया है—

> एकै धर्म एक व्रत नेमा।
> काय बचन मन पति पद प्रेमा।

आज जब मैं यह लेख लिख रहा हूँ, मेरे मानस पटल पर आश्रम-वासिनी बा की त्यागमयी मूर्ति अङ्कित हो-हो उठती है। खादी की एक मोटी सी साड़ी और उसी का जम्पर। तन पर कोई आभूषण नहीं। बा के दर्शनों का सौभाग्य मुझे जीवन में अनेक बार प्राप्त हुआ है। काँग्रेस की बड़ी सभाओं में मैंने बा को महात्मा गाँधी से दूर स्त्रियों की भीड़ में खोई हुई सी देखा है। उन्हें प्रसिद्ध की चाह नहीं थी। वे बहुत बोलती भी नहीं थीं। उनका प्रत्येक क्षण किसी न किसी काम में बीतता था। जब कोई काम नहीं होता था तब वे चर्खा चलाती थीं।

सबसे पहले मैंने उन्हें आज से कोई २० बरस पहले हरद्वार में देखा था। कुम्भ मेले के अवसर पर वहाँ खादी की एक नुमायश हुई थी और महात्मा जी उसका उद्घाटन करने आए थे। एक साधारण स्वयं सेवक के नाते मैं वहाँ उपस्थित था। उत्सव के बाद महात्मा जी एक कैम्प में विश्राम के लिए गए। उस समय मैंने बा का पति-प्रेम देखा। उन्होंने बड़े स्नेह से महात्मा जी के हाथ पाँव धुलाए एक स्वच्छ खद्दर के टुकड़े से उनके पैरों को पोंछा। महात्मा जी चर्खा चलाते जाते थे और उपस्थित जनों के प्रश्नों का उत्तर देते जाते थे। बा मूक दृष्टि से प्रश्न-कर्ताओं की ओर देखती थीं। उनकी दृष्टि में इस बात की प्रार्थना भरी थी कि गाँधी जी को विश्राम करने दो। वे थके हैं, उन्हें और थकाओ मत।

एक सज्जन ने महात्मा जी के लिए कुछ संतरे भेजे थे। उन संतरों को गाँधी जी ने उपस्थित जनों में बँटवा दिये थे। जहाँ तक मुझे स्मरण है, बा के हिस्से में चार संतरे पड़े थे। पर उन्होंने उन्हें खाया नहीं था। अपनी रूमाल में बाँध कर रख लिया था। कुछ घंटे बाद उन्हीं संतरों को उन्होंने महात्मा गाँधी के सामने खाने के लिए उपस्थित किया।

उसके बाद मैंने उन्हें मगन-वाड़ी (वर्धा) में देखा। यह उन दिनों की बात है जब महात्मा जी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति थे और मैं इत्तिफाक से उसका एक मन्त्री चुन लिया गया था। इस सिलसिले में मुझे कई बार वर्धा जाना पड़ा था। एक बार बापू के साथ बैठ कर माता कस्तूरी बा के हाथ से बनी रोटी खाने का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। कोई ४० या ५० व्यक्ति एक साथ खाने बैठे थे। उनमें दो अमरीकन पत्रकार भी थे। आश्रम की महिलाएँ खाने वालों के सामने रोटी साग मट्ठा आदि लाकर रख रही थीं। सबके अन्त में बा ने स्वयं अपने हाथों से खाने वालों की थालों में कोई चीज परोसी।

यह दावत समाप्त होने पर मैं वहाँ के कायदे के अनुसार अपनी थाली धोने के बाद रखने आया तो क्या देखता हूँ कि बा आश्रम की कन्याओं के साथ बैठी बचा खुचा खाना खा रही हैं। तवे पर वे रोटियाँ रखे हुए थीं और बटलोई में से दाल निकाल निकाल कर खा रही थीं। जो जिन बर्तनों में खाता था उसको वे बर्तन धोने पड़ते थे। तवा और बटलोई जो सबसे अधिक माँजे जाने वाले बर्तन थे, बा ने अपने हिस्से में रक्खे थे।

अंतिम बार मैंने उन्हें सेवा-ग्राम में देखा। जेठ की दोपहरी थी और वे तपती धूप में एक बाल्टी पानी कुएँ पर से अपनी कुटी में ले जा रही थीं। उस समय उनकी अवस्था ७० के ऊपर थी।

भारत के सबसे बड़े पूज्य जगतविख्यात महात्मा गाँधी की पत्नी का ऐसा कठिन परिश्रम का जीवन था। आदर्श के पीछे महात्मा जी ने उन्हें कितना सताया है यह वे ही जानते हैं। परन्तु बा ने कभी शिकायत नहीं की। वे अपने आपको पति की इच्छाओं की तस्वीर जो बनाना चाहती थीं। और वे सफल हुईं। उनके इस संसार से उठ जाने से महात्मा गाँधी असहाय और अकेले से हो गए हैं। अब वे अपने सत्य का प्रयोग किस पर करेंगे?

महात्मा गाँधी को महान पुरुष बनाने में बा का अदृश्य हाथ बराबर काम करता रहा है। यह उन्हीं का त्याग, तपस्या और लगन का जीवन था जिसने गाँधी को गाँधी बनाया। उन्होंने पति का मार्ग प्रशस्त रखने के लिए अपने समस्त अरमानों की बलि दे दी। उनका तप व्यर्थ नहीं गया। आज इसीलिए महात्मा गाँधी का दुख सारे भारत का दुःख बन गया है।

गीत

लेखिका, 'प्रवीणा'

देव! रचना में तुम्हारी हो गयीं ये भूल क्यों हैं?

चांदनी छिटकी कहीं यदि,
तो कहीं क्यों रात काली।
दीखता मरु-थल कहीं यदि,
तो कहीं शोभा निराली।

फूल पग-पग पर बिछे यदि तो कहीं पर शूल क्यों हैं?

कुञ्ज छायामय बने यदि,
तो कहीं पर धूप भी है।
गान मोहक लग रहे यदि,
तो कहीं वे स्वर रूप भी है।

एक ऋतु अनुकूल होती, शेष, तो प्रतिकूल क्यों हैं?

एक नभ में दीप अनगिन,
मानता तुमने जलाये।
क्या न तब अनगिन घरों के,
वे जला कर हैं बुझाये।

प्राण-लौ जिनमें अनश्वर दीप वे निर्मूल क्यों हैं?
देव! रचना में तुम्हारी हो गयीं ये भूल क्यों हैं?

असली मुर्गाछाप

लेखक, कुँअर सुरेशसिंह, कालाकांकर

[१]

तेजभान सो रहे थे। जेठ की लपलपाती दोपहरी, दो दिन की थकान और सड़क पर की घनी अँमराई ने उन्हें आगे बढ़ने न दिया। वे एक पेड़ के नीचे साइकिल लिटा कर और छाते को जमीन में गाड़ कर गहरी नींद में सो गये थे।

तेजभान बेचारे कल ही से बहुत परेशान थे - इतने उत्साह से उन्होंने सभा के लिए एलान किया था—लोगों को बड़े बड़े नेताओं के आने की आशा दिलाई थी—लेकिन ऐन वक्त पर सब के सब न आए तो न आए। तेजभान खीझ और शरमिन्दगी के कारण सभा की ओर न जा सके। क्या उत्तर लोगों को देंगे? कई बार तो उन्हें इसी प्रकार नेताओं के न आने से किसानों के आगे झूठा बनना पड़ा है—अब किस मुँह से उनके आगे सफाई देंगे। उन्हें कुछ सूझ न पड़ा। वे इस बार खिन्न होकर शाम ही को एक ओर चल पड़े थे। कहाँ जावें? क्या करें? कुछ उनकी समझ ही में न आता था। रात को एक गाँव में ठहर गए। दूसरे दिन से ही उन्हें अपना नया कार्यक्रम तै करना था। इस हलके में अब उन्होंने काम न करने का करीब क़रीब तै कर लिया था।

सबेरा होते ही उन्होंने अपने मकान की राह पकड़ी थी, दूसरे मंडल में जाने के पहले वे एक बार घर हो लेना चाहते थे। घर कुछ ज्यादा दूर भी नहीं सिर्फ बीस मील के फासले पर था—सोचा था कि धीरे धीरे और रुकते-रुकाते भी चलेंगे तो दोपहर तक पहुँच जावेंगे। लेकिन कई दिन की दौड़ धूप उनकी उखड़ी देह को थका डालने के लिए काफी थी। वे ग्राम के बाग की घनी छाया में थोड़ी देर आराम करने लेटे तो नींद आ गई—और जब आँख खुली तो दोपहर बीत चुका था।

यहाँ तेजभान का थोड़ा परिचय दे देना अनुचित न होगा। वे हलके के झोरिया नेता (कार्यकर्ता) ही नहीं बल्कि एक परोपकारी जीव थे। परोपकार में उन्हें एक प्रकार का रस आता था, और इसी रसास्वादन के लिए वे अपना घर बार छोड़ कर एक मुद्दत से देश की सेवा में लग गए थे।

यद्यपि यह सेवा उनके लिए काफी मँहगी पड़ती थी लेकिन उनकी लगन ऐसी थी कि कोई उन्हें इस संकल्प से डिगा नहीं सकता था। कई बार आपस में गाली गलौज हुई, कई बार हाथापाई की भी नौबत आई, लेकिन तेजभान सब कुछ सह कर भी उसी हलके में डटे रहे, पर इस बार की नेताओं की वादाखिलाफी उनके लिए असह्य हो गई थी, और यही कारण था कि वे दूसरे हलके में जाने की सोच चुके थे। फिर एक जगह छोड़ कर दूसरी जगह जाना उनके लिए कैसे मुश्किल होता जब वे कई संस्थाओं को छोड़ चुके थे। क्षत्रिय सभा, हिन्दू सभा और फिर आर्य समाज को छोड़ कर वे अन्त में काँग्रेस में आ गए थे और आजकल उसी में रह कर अपनी सेवा के कार्यक्रम को पूरा कर रहे थे।

काँग्रेस आन्दोलन में जेल जाने पर जहाँ तेजभान ने टमाटर खाना, शीर्षाशन करना और गीता पढ़ना सीख लिया था। वहीं आर्यसमाजी रहने के समय की कुछ आदतें अब भी उनमें मौजूद थीं। सनलाइट साबुन से कपड़ा धोना, तर्क का अस्त्र चलाना और डायरी रखना उनकी नित्य क्रिया में शामिल थे। आर्य मुसाफिर डायरी उनके झोले में चौबीसों घंटे पड़ी रहती थी—भले ही उसमें दवाइयों के नुसखे ही क्यों न लिखे जाते हों।

लेकिन इन सब आदतों में वे अपनी डायरी को बहुत महत्व देते थे क्योंकि उन्हें एक स्वामीजी ने बताया था कि किस प्रकार एक बार रेल में सफर करते समय उनका टिकट खो जाने पर उनकी श्री डायरी जी ने उनको साफ छुड़ा दिया था। श्री डायरी जी में टिकट जी का नम्बर स्वामीजी नोट किए हुए थे इसीसे उन्हें रेल के कर्मचारियों ने छोड़ दिया था।

तभी से तेजभान को भी डायरी और डायरी में नम्बर नोट करने की धुन सवार हुई। वे उसमें अपनी पूरी हुलिया

तो नोट ही किये हुए थे साथ ही साथ यार दोस्तों का भी पूरा विवरण उसमें था। तेजभान रेल पर तो कभी सफर करते नहीं थे क्योंकि पैर गाड़ी (साइकिल) ही उनकी रेलगाड़ी थी, इससे उन्होंने टिकट के नम्बर लिखने का शौक साइकिल का नम्बर लिख कर पूरा किया था। लेकिन इन सबके अलावा एक नम्बर जो उनकी डायरी के पहले ही पेज पर मोटे मोटे अक्षरों से नोट था वह था—(छाता असली मुर्गा छाप नम्बर ७१५ दाम २।।)) यह थी उनके छाते की हुलिया जिसमें असली मुर्गा छाप का ट्रेडमार्क था और जिसमें के ट्रेडमार्क के ७१५ नम्बर को भी तेजभान जी ने अपने छाते का सीरियल नम्बर समझ कर डायरी में नोट कर रखा था।

नींद टूटते ही तेजभान ने देखा कि सूरज बरगद के बड़े पेड़ के पीछे छिप जाने की तैयारी में है। दिन बीतने को आ गया लेकिन अभी आधा रास्ता तै करने को बाकी था। वे जल्दी से साइकिल उठा कर चल पड़े। घर दो ढाई मील भी न गये होंगे कि उन्हें अपने छाते की याद आई। छाता तो वे पेड़ के नीचे ही भूल आए हैं। बड़ी आफत हुई। फिर लौटना पड़ा। फिर पता नहीं मिले न मिले। अभी ज्यादा पुराना भी नहीं हुआ था। लौट कर देखना तो पड़ेगा ही। लेकिन चलते समय न जाने क्यों दिखाई नहीं पड़ा! जैसे वहाँ था नहीं क्या! खैर अब तो सिवा लौटने के दूसरा उपाय भी नहीं है। यही सोचते हुए तेज भान लौट पड़े।

धीरे धीरे बाग नजदीक आने लगा और फिर वह पेड़ भी साफ दिखने लगा जिसके नीचे उन्होंने दोपहरी निवारी थी, लेकिन छाते का कहीं पता नहीं। जमीन में छाते का निशान चुपचाप इनकी ओर जरूर देख रहा था। तेजभान करते ही क्या निराश होकर अपनी साइकिल पर बैठ कर फिर मनमारे अपना सफर तै करने लगे।

अभी मुश्किल से वे चार पाँच फर्लाङ्ग गए होंगे कि कोई चीज देख कर वे एकाएक चौंक पड़े। यह था उनका असली मुर्गा छाप नम्बर ७१५ वाला छाता जिसके लिए वे इतनी दूर से लौटे थे। लेकिन बात कुछ ऐसी पड़ गई थी कि वे अपने छाते को देख कर भी कुछ कह नहीं सकते थे। उनका छाता जो साहब हाथ में लिए हुए थे वे एक मुरदे की अरथी में कंधा दिए हुए थे।

तेजभान के मन में छाते के मोह और साधारण लोक-व्यवहार का द्वन्द होने लगा। मुमकिन है यह छाता इसी आदमी का हो—एक तरह के छाते क्या बहुत नहीं होते। फिर इस दुख के समय भला कौन छाता चुरावेगा—इसी प्रकार के अनेक तर्क तेजभान का मन सामने रखता था लेकिन छाते का मोह है कि उसके सामने कोई भी दलील नहीं चलती। तेजभान ने सोचा अच्छा पहले इसकी भली-भाँति जाँच कर ली जावेगी तब कुछ कहा जावेगा। वे साइकिल से उतर कर अरथी के साथ साथ चलने लगे और थोड़ी देर बाद जब सब लोग एक पेड़ के नीचे आराम करने को ठहरे तो उन्होंने बड़ी नम्रता से छाते वाले से पूछा—'भाई साहब यह छाता क्या आप ही का है।' 'और नहीं क्या तुम्हारा है।' छाते वाले ने बड़ी रुखाई से कहा—'तुमको कुछ सूझ नहीं पड़ता?'

तेजभान जनता जनार्दन की सेवा करने के कारण ऐसी रूखी बातें सुनने के आदी हो गए थे। अतः वे जरा भी विचलित हुए बगैर बोले—'भाई साहब आप नाखुश क्यों होते हैं? मैं एक छाता उस पीछे वाली बाग में भूल आया था। मैंने समझा कि शायद आपने उसको पड़ा देख कर उठा लिया हो—इसमें गुस्सा होने की तो कोई बात नहीं है—अगर आप अपना छाता खोल करके मुझे दिखा देते तो मेरी भी दिलजमई हो जाती।'

छाते वाले ने हुज्जत बढ़ाना ठीक न समझ कर तेज-भान के आगे छाता बढ़ा कर कहा—'आप ही देख कर दिलजमई कर लीजिए।'

छाते वाले की बात से यद्यपि तेजभान को विश्वास हो गया था कि यह छाता उनका नहीं है तो भी शरमाते शर-माते उन्होंने छाता खोल ही दिया। पर यह क्या? यह तो उन्हीं का छाता निकला। वही २।।) वाला असली मुर्गा छाप। नम्बर ७१५ के ऊपर वही चिरपरिचित मुर्गा जैसे उन्हीं की ओर देख रहा है। अचानक अपनी जीत पर तेज-भान कुछ मुसकुराए और छाते वाले से बोले—'छाता तो भाई साहब यह मेरा ही निकला। यह देखिए इसका नम्बर और मेरी डायरी में इसकी पूरी हुलिया।' अब अपनी दिल-

जमई कर लीजिए।' यह कह कर उन्होंने झोले से डायरी निकाल कर छाते वाले सज्जन के सामने फेंक दी।

छाते वाले को अब गुस्सा आ गया। उसने डायरी की ओर निगाह भी नहीं उठाई और तेजभान के हाथ से छाता छीन कर अपने साथियों से बोला—'उठाओ भाई अरथी। ऐसे ऐसे लोटा चोरों से पाला पड़ा है कि क्या बतावें—चंदे से पेट नहीं भरता तो रास्ता चलतों को दिन दहाड़े ही जान पड़ता है लूट लेंगे। चोरकट कहीं के।'

तेजभान की ईमानदारी और देश सेवा दोनों पर प्रहार करके 'रामनाम सत्य है' की घोषणा करती हुई वह टोली फिर आगे बढ़ी।

[२]

तेजभान की डायरी में यदि असली मुर्गा छाप और नम्बर ७१५ न निकला होता तो वे उस छाते वाले से खुद माफी माँग कर—कोई छोटा मोटा प्रायश्चित कर डालते—पर इतनी अधिक ज्यादती उनके लिए असह्य हो उठी। उनका हृदय छाते से ज्यादा सत्य को साबित करने के लिए आतुर हो उठा।

वे कुछ दूर तक तो हाथ में साइकिल लिए पैदल ही चले, फिर न जाने क्या सोच कर साइकिल पर बैठ कर आगे के गाँव में तेजी से चले गए। यह गाँव सड़क के किनारे ही पर था, जहाँ जटायू जी नाम के एक सन् २१ के काँग्रेसी कार्यकर्ता कुटी बना कर रहते थे। तेजभान का जटायू से और जटायू जी का गाँव वालों से काफी परिचय था। तेजभान ने पहले पहुँच कर उनसे अपने छाते का पूरा किस्सा बताया और फिर बड़ी उत्सुकता से वे अरथी की प्रतीक्षा करने लगे।

धीरे धीरे अरथी भी आई और वे लोग लाश को गाँव की महुआरी में रख कर सुस्ताने लगे। गाँव के लोग जो छाता छीनने आए थे, छाते वाले को देख कर सहम गए। वे पास के गाँव के एक ठाकुर थे जो अपनी चची की लाश लेकर गङ्गा किनारे जा रहे थे।

ठाकुर ने गाँव वालों के साथ तेजभान को देख कर कहा—'इनका सुना भइया! ये जो बिसतुइया ऐसे साइकिल लिए खड़े हैं। यहाँ तो ऐसे सूधा बने हैं कि जैसे कुछ जानते ही नहीं। अभी पीछे जो ऊसर पड़ता है वहीं हम लोगों को मधुमक्खी की तरह चपट गए। जी की अटक गए कि यह हमारा छाता है। यही देश-सेवा कर रहे हैं यहाँ।'

ठाकुर की बात सुन कर किसी की हिम्मत न पड़ी कि तेजभान की ओर देखें—फिर बोलता कौन ? किसी के मुँह से कोई बात ही न निकली।

'रामनाम सत्य है ! सत्य बोलो मुक्त है।' की आवाज से महुआरी गूँज उठी और अरथी फिर आगे बढ़ी।

लाश कुछ दूर चली गई तब कहीं जाकर तेजभान का कंठ फूटा—बोले—'वाह, भाइयो वाह! धन्य है आप लोग! उसने बातों की रेलगाड़ी छोड़ी और आप लोग हो गए सब के सब उसी की ओर। जैसे कोई बोलना ही नहीं जानता। अच्छा न्याय किया। आप लोगों ने।' लेकिन जब प्रतिवादी ही मौजूद नहीं तो फिर फैसला किसका किया जावे। सब लोग चुपचाप अपने गाँव की ओर लौट गए।

तेजभान भी साइकिल से उतर कर पैदल चल रहे थे। कुछ दूर जाने के बाद उन्हीं ने खामोशी तोड़ी। बोले—'ठाकुर साहब! ईश्वर हम सब की भलाई बुराई को देखता है। उससे कोई भी बात छिपी नहीं है। आपको एक तुच्छ छाते के लिए ईमान न खोना चाहिए। आपको तो दूसरे की वस्तु मिट्टी के ढेले के तुल्य समझना चाहिए। सच कहता हूँ, मिट्टी के ढेले के समान'......'

ठाकुर ने इनको ज्यादा मुँह लगाना ठीक नहीं समझा। वे चुपचाप बिना कुछ बोले चलते ही गए।

तेजभान फिर बोले—'जान पड़ता है अब आपको पश्चाताप हो रहा है। पश्चाताप क्यों न होगा—बात ही ऐसी है। आदमी को मरघट पर जाकर कहते हैं वैराग्य उत्पन्न होता है—फिर दूसरे की वस्तु से तो हमेशा ही वैराग होना चाहिए।'......'देखिए आपने मुझे चोर बनाया; बेईमान कहा पर मैंने किसी बात की परवाह न की। जानते हैं क्यों? इसलिए कि मैं जानता था कि मैं सत्य के मार्ग पर हूँ और यह छाता जो इस समय आपके कर कमल में है, हमारा वही २॥) वाला नम्बर ७१५ का असली मुर्गा छाप छाता है। और इसको भाई साहब अब आप भी भलीभाँति जान गए हैं। यही नहीं इस समय आप यह भी सोच रहे हैं कि एक ऐसे आदमी को—जिसने अपना सारा जीवन आप

लोगों की सेवा में लगा दिया है—एक छाते जैसी तुच्छ चीज से क्यों जुदा किया जावे।'

तेजभान कुछ और कहते यदि ठाकुर के एक साथी ने उन्हें डाट न दिया होता। 'अच्छा अब बहुत ह्वै गवा। अब चुप्पै रहौ नाहीं तौ मारब बेंड़ ह्वै जाव्यौ। रस्ते से कहहै घेर लिहिन घाट पै न जानी का होई।'

तेजभान इसके लिए तैयार नहीं थे। लेकिन वे इसके लिए भी तैयार न थे, कि अपना छाता योंही छोड़ दें जब कि एक आदमी उनके सामने से ही उसे सरासर चोरी क्यों सीना जोरी करके हथियाए लिए जा रहा है।

लेकिन ठाकुर के साथी की घुड़की ने उन्हें थोड़ी देर के लिए चुप जरूर कर दिया। वे आगे कुछ कहने के लिए मौका ढूढने लगे क्योंकि उन्हें अब विश्वास हो गया था इस प्रकार उनका छाता उन्हें नहीं मिलेगा।

चार मील खुफिया पुलीस की तरह पीछा करने के बाद ऐसा मौका मिला उस बड़े चौराहे पर जहाँ सड़क के किनारे लाश रख कर फिर ठाकुर लोग दम लेने लगे थे। चौराहे पर पहले से ही कुछ लोगों की भीड़ थी, जो वहाँ लारी का इन्तजार कर रहे थे। एक लाश आई देख सब यात्रियों का कोलाहल कुछ देर के लिए थम सा गया जैसे उस मृत आत्मा के आदर के लिए सब मौन हो गए हों।

'साइकिल कम्पलीट और पाँच कोस से पैदल चलना पड़ रहा है। हे! ईश्वर, जैसी तुम्हारी मरजी।' तेजभान ने गहरे विश्वास के साथ खामोशी तोड़ी।

'यह नागदानी परमात्मा सबको दिखाता है भाई! जो यहाँ आया है वह मरेगा भी। अब तो सिवा धीरज धरने के और दूसरा चारा ही क्या है। कहा है 'एक दिन मन पंछी उड़ि जैहैं।' एक यात्री ने तेजभान को धीरज बँधाते हुए कहा।

तेजभान बोले—'भाई साहब यह नागदानी जो मेरे ऊपर पड़ी है वह ईश्वर की ओर से नहीं बल्कि हमारे इन मेहरबान ठाकुर साहब की ओर से आई है जो हमारा असली मुर्गा छाप छाता जबरदस्ती हथिआए हुए बैठे हैं। इसी छाते के लिए साइकिल कम्पलीट रहते हुए भी मुझे इनके साथ दस मील की मञ्जिल पैदल ही मारना पड़ रहा है।'

भीड़ से एक फुरफुराहट सी दौड़ गई। अपने किसी सम्बन्धी की लाश ढोते समय कोई ऐसा छोटा काम करेगा, इस पर जैसे कोई विश्वास ही नहीं करना चाहता था।

'अरे राम! राम!! कैसी बात करते हो भाई। ऐसी बात सोचने से भी पाप लगता है।' एक वृद्ध ब्राह्मण ने तेजभान से कहा। सभी यात्रियों ने ब्राह्मण की राय की ताईद की। 'हाँ भला ऐसा भी कहीं हो सकता है।' 'ऐसा छोटा काम कोई नहीं कर सकता'—इसी तरह की मिलती हुई रायें कई लोगों ने दीं। ठाकुर साहब ने जन-समूह को अपनी ओर पाया तो अपील के शब्दों में वे बोले—'देखते हैं आप लोग इनकी जबरदस्ती। दो तीन घंटे से हम लोगों के पीछे पड़े हैं इस छतुली के लिए। जैसे कोई सी० आई० डी० पीछे पड़ा हो। सौ दफा कहा कि अगर छाते की जरूरत है तो हाथ पसार कर माँगो—हमारी खुशी होगी तो दे देंगे। लेकिन इस तरह तो अपना छाता भी दे और ऊपर से चोर बेईमान बनें। भाई! यह हमारे बूते का नहीं है।

तेजभान बोले—'छाता तो भाई साहब, सच पूछिए तो हमारा ही है—इसे आपका भी जी जानता होगा। पर इस समय आपका उस पर कब्जा है इससे आप शाह मैं चोर समझा जा रहा हूँ। यह हो सकता है कि आपने उसको चुराने के इरादे से बाग से न उठाया हो बल्कि इसका कोई मालिक न पाकर ही हाथ में लगा लिया हो लेकिन अब आप उसके मोह में पड़ गए हैं और एक झूठ को छिपाने के लिए आपको कई झूठ बोलनी पड़ रही हैं।'

ठाकुर साहब को फिर क्रोध आ गया। वे काफी परेशान हो चुके थे। गुस्से से बोले—'अच्छा तुम्हारा ही छाता—है—बस। जाओ जो करना हो करो। लेकिन अब खोपड़ी पर चढ़ कर ज्यादा बरबराओगे तो ठीक न होगा। कंगला कहीं का।'

तेजभान ने किसी किताब में पढ़ा था कि हारने वाला गुस्सा करता है। इससे वे ठाकुर साहब के क्रोध पर विजय से मुसकुराते हुए बोले—'जो खुशी हो आप कहलें। आप ही की जबान बिगड़ेगी—मेरा क्या। लेकिन यह बिना साबित किए—कि यह असली मुर्गा छाप वाला छाता हमारा ही है—मैं तो आपका साथ कभी नहीं छोड़ूँगा।'

ठाकुर साहब काफी ऊब चुके थे—उठ कर खड़े हो

गए और अपने साथियों से कहा—'उठाओ भइया ! अभी बहुत दूर चलना है ।

'रामनाम सत्य है' 'सत्य बोलो मुक्त है'''''लाश फिर आगे चली—तेजभान ने भी अपनी साइकिल उठाई और अरथी के पीछे पीछे पैदल चले ।

ठाकुर साहब ने उन्हें फिर करीब आता देख कर लाठी उठा कर कहा—'अब बहुत हो चुका—अब जिसके आदमी तुम हो वह हम जान गए हैं । दूर ही रहो । लाठी के तान में आवोगे तो मारूँगा भंडारा खुल जावेगा । इसीसे कहा है कि छोटे आदमियों को मुँह न लगाना चाहिए ।'

तेजभान बोले—'अच्छा भाई साहब जैसी आपकी मरजी । लेकिन जरा सोचिए तो कि आपका यह काम कैसा है ? एक मामूली सा पुराना छाता जो एक नहीं कई बरसातें खा चुका है । इस समय आपको अच्छे बुरे की पहचान करने से रोक रहा है । आखिर उसके लिए आपको इतना मोह क्यों हो गया है । मोह क्यों, मैं तो कहूँगा आपको उसके लिए जिद सी हो गई है । और जिद से भाई साहब सच मानिये, आदमी का बड़ा नैतिक पतन होता है । यह मनुष्य के शरीर में घुन की तरह लग जाती है और उसका जीवन सब तरह से नष्ट हो ही जाता है ।'

ठाकुर के घूर कर देखते ही तेजभान एक क्षण के लिए चुप हो गए पर फौरन ही उनका व्याख्यान फिर शुरू हो गया । 'और यह भी तो हुआ होगा कि छाता उठाते समय आपने यह थोड़े ही सोचा होगा कि इतनी जल्दी इसके मालिक से भेंट हो जावेगी । और वह आदमी जो इस असली मुर्गा छाप वाले छाते का असली मालिक है आपको अपनी डायरी में इसका नम्बर और पूरी हुलिया दिखा देगा । मैं तो भाई साहब उसी जगह कट गया था अगर मेरी डायरी में इसका ७१५ नम्बर न निकल आता ।'

ठाकुर साहब का धैर्य अब छूट चुका था । उन्हें जिंदगी में यह पहला ही मौका था कि किसी ने अपनी बकवास से आम को इमली कर दिखाया हो । वे यदि अपनी चाची की लाश के साथ न होते तो तेजभान को बिना मारे न छोड़ते पर उसका समय नहीं था, गुस्से से उन्होंने छाते को सड़क से दूर फेंकते हुए कहा—'ले अपना मुर्गा मुर्गी छाप वाला असली छाता । दमड़ी की हाड़ी गई कुत्ते की जात पहचानी गई । समझ लेंगे कि तेरहीं में महाब्राह्मण को दे दिया ।'

तेजभान अपनी विजय पर प्रसन्न हो गए । सत्य की सदा विजय होती है । लपक कर उन्होंने छाता उठा लिया और ठाकुर साहब को बहुत धन्यवाद देकर साइकिल पर चढ़ कर अपने गाँव की ओर चले गए ।

× × ×

पूरे दो महीने घर में रहने के बाद जब वे अपने हलके की ओर लौटे तो सबसे पहले वे जटायू जी की कुटी के पास उतरे । उस दिन गाँव वालों के साथ उस ठाकुर की बात में पड़ कर जटायू भी इनकी बातों को झूठा समझ गए थे । आज वे उनको सारा किस्सा बता कर और वह छाता दिखा कर अपनी सचाई साबित कर देना चाहते थे । लेकिन उनको देखते ही जटायू ने अपने छप्पर में खोंसे हुए एक छाते को निकाल कर इन्हें देते हुए कहा—'लो भाई अपना छाता । उस दिन तुमने झूठ मूठ ही उन ठाकुर साहब से झगड़ा ही करा दिया होता । वह तो खैरियत हुई कि वह जान पहचान के आदमी निकल आए । तुम्हारे जाने के बाद ही एक हरवाहा इसे यहाँ दे गया है । उसे यह उसी बन्दराही बाग में मिला, जहाँ तुम उस दिन सोए थे । मैं तो इसे देखते ही समझ गया कि यह तुम्हारा ही छाता है । इसीसे इसे रखलिया था कि तुम जब इधर फेरा करोगे तो तुमको इसे दिखा कर तुम्हारी भूल बताऊँगा ।'

तेजभान के काटो तो खून नहीं । उन्होंने जल्दी ही छाता खोला । उसमें भी लिखा था असली मुर्गा छाप नं० ७१५ । उनका सर जैसे घूम गया । तो क्या सभी 'असली मुर्गा छाप' वाले छातों का नम्बर ७१५ होता है ?

ग्राहकों को सूचना

दीदी हर महीने की पहली तारीख को निकल जाती है । यदि किसी महीने की दीदी आपको पहले ही हफ्ते में न मिले तो समझिये कि गुम हो गई । उस दशा में तुरन्त डाकघर से पूछताछ कीजिये और हमें भी सूचित कीजिये ।

—संचालिका

तब और अब

राजपूतानियों की वर्तमान दशा की भूतकाल से तुलना

लेखिका, रानी लक्ष्मीकुमारी रावतसर

ही खागां ललकारती, धक फलसे धाडांह।
वे पै पड़दै कामणी, लज भय लुंगाड़ांह॥

शत्रु अथवा डाकुओं के आने पर घर से बाहर निकल तलवार लेकर ललकारती थीं, वही राजपूत कामनियाँ गुण्डों के भय और लज्जा से परदे में बैठी काँपती है।

पोल कढ्यां पग लड़खड़ै, घर बारे घिघियाय।
पड़दैं पूरी पदमण्यां, जोधा किण विध जाय॥

दरवाजे से बाहर निकलने पर पाँव लड़खड़ाने लग जाते हैं। घर से बाहर घिघियाने लग जाती हैं। सच है पर्दे की हूरें योद्धा कैसे प्रसव कर सकती है।

उठे नित देती अरघ, कदै न लज्जे कूँख।
नाम सुणंतां मरण रो, थुथकारे भर थूंक॥

प्रातः काल उठ कर सूर्य को अर्घ प्रदान करते समय नित्य वन्दना करतीं मेरी कोख को कभी लज्जित न होना पड़े, सन्तान कायर न हो जाय। परन्तु अब मरने का नाम सुन कर ही कहती हैं थू थू ऐसा शब्द मत बोलो!

मङ्गल मरण मनावती, रणचण्डी रच रास।
जीव बच्यां जलसा जुड़ै, राजपूतां रणवास॥

अपने धर्म के लिये बलिदान होना ही मंगल समझती थी, रणचण्डी का दृश्य दिखलाती थी। वे ही क्षत्राणियें अब जान बच जाने पर जनानखाने में खुशियें मनाती है।

राग सिंधुवा रीझती, सुत धवड़ातां सोय।
लैला मजनूं नाटकां, हरख जागरण होय॥

राजपूत मातायें अपने पुत्र को दूध पिलाते समय सिन्धु राग में, जो युद्ध के समय की वीर रस की रागिनी है, गा गा कर सुलाती थीं वे ही क्षत्राणियें अब लैला मजनूँ के नाटको सिनेमा देखने में खुशी से रात रात भर व्यतीत कर देती है।

धव भागां धुधकारती, रजवर कुल हिय रक्खि।
सोड़ घुसाड़े सोहडी, 'अरे वाहरे' अक्खि॥

पति के युद्ध से भाग आने पर अपने राजपूत कुल मर्यादा को याद रख उसे फटकारती थीं, परन्तु अब 'अरे वाह सकुशल आ गये' कह कर घर में घुसा लेती हैं।

धरतां पग धर धूजती, दाकलता दिगपाल।
जणती रजपूताणियां, थण थी झाल वंचाल॥

वे क्षत्राणिये अपने स्तन का दूध पिला वह ओजस्वी सन्तान उत्पन्न करतीं कि जिनसे धरा धूजती, दिक्पालों को दहलाने की हिम्मत रखते।

रूलगी रजपूताणियां, खूटी रतनां खाण।
पूथलियां अब मेम री, प्रसव रही पाखाण॥

ऐसी क्षत्राणियें नहीं रहीं, वह रत्नों की खानें समाप्त होती जा रही है। अब तो ये मेमों की नकल करने वाली पुतलियें रत्नों की जगह पत्थर प्रसव कर रही हैं।

है सिंघाणियां आजलग, निरबीजां घर नाहिं।
वंस उजालक बाहुड़ी, मिले झूंपड़ां मांहिं॥

इतना कहने पर यह न समझें कि क्षत्रित्व लोप हो गया है। अभी तक सिंहनियें मौजूद है। राजस्थान भूमि निर्बीज नहीं हुई है। वंश को प्रदीप करने वाली वधुएँ झोंपड़ों में मिल जायँगी।

सुन्दरी बनने का सरल उपाय

यदि आप दुबली हैं तो यह मत समझें कि खूब खाने से आप मोटी हो जायँगी। इसी प्रकार यदि आप मोटी हैं तो यह मत समझें कि कम खाने से आप दुबली हो जायँगी। शरीर को इच्छा के अनुसार मोटा या पतला बनाने का एक ही रास्ता है। वह है ठीक ढङ्ग का भोजन करना और ठीक ही ढङ्ग का व्यायाम करना।

भोजन आनन्द के साथ करें। जल्दी तो बिलकुल न करें। याद रक्खें कि मनुष्य के शरीर के लिए भोजन उतना ही जरूरी है जितना इञ्जन के लिए कोयला-पानी। हमारा शरीर एक प्रकार का इञ्जन ही तो है और हम जो भोजन करते हैं वह इस इञ्जन रूपी शरीर को चलाने वाला ईंधन है। इस ईंधन का ठीक चुनाव करें। भोजन के समय को जीवन के सर्वोत्तम क्षणों में समझें। उस समय सिवाय भोजन के और किसी बात की चिन्ता न करें। भोजन के बाद थोड़ा आराम करें। यह आराम का समय चाहे दस ही पाँच मिनट का क्यों न हो।

भोजन के बाद दूसरी जरूरी चीज है, आप सब प्रकार की चिन्ता या परेशानी से बचें। धीरज को अपना साथी बनावें। परेशान होने से कोई काम बन न जायगा हाँ, धीरज रक्खेंगी तो उसका कोई न कोई रास्ता निकल आएगा।

यदि आपको भूख कम लगती है तो समझें कि जो भोजन आप करती हैं वह आपके शरीर के माफिक नहीं पड़ रहा है। उस दशा में अपना भोजन तुरन्त बदलें। जहाँ तक हो हलका, जल्दी हजम होने वाला भोजन करें।

शरीर का स्वास्थ्य और सौंदर्य बढ़ाने में उपवास बड़ा सहायक होता है। मैंने स्वयं इसे करके देखा है। यह तो ठीक है कि उपवास के दिनों में शरीर का वजन न बढ़ेगा परन्तु उसके बाद ही आपको लाभ प्रतीत होगा। महात्मा गाँधी ने जब जब उपवास किया है, उनका स्वास्थ्य बढ़ गया है। शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिए उपवास एक औषधि है। कम से कम हफ्ते में एक दिन कम या बिलकुल न खाने की आदत डालो। उस दिन सिर्फ दूध पीकर रहो, या संतरों का रस पिओ या टमाटर का रस पिओ या खाली पानी ही पीकर रहो। इस क्रिया से तुम्हारे पेट को अपना हाजमा ठीक करने की ताकत मिलेगी और हाजमा ठीक हो जाने पर निश्चय ही तुम्हारी भूख बढ़ेगी और भूख के साथ वजन बढ़ेगा। बहुत सी स्त्रियाँ व्रत उपवास रखती हैं, धार्मिक दृष्टि से। कितनी ही उन व्रत उपवासों में पानी भी नहीं पीतीं। सौंदर्य की दृष्टि से यह हानिकारक है। उपवास की दशा में जितना पानी पिया जा सके, पीना चाहिए। महात्मा गाँधी ऐसा ही करते हैं। इससे शरीर की सफाई हो जाती है।

ऋतु और अपनी जेब के अनुसार आप अपना भोजन निश्चित कर सकती हैं। वह किस तरह का हो, इसका चुनाव आप नीचे लिखे नमूने पर करें।

प्रातः काल के समय का जलपान—एक गिलास दूध या फल जैसे आम, अमरूद, संतरा, सेब या कोई सूखा मेवा जैसे किसमिश, अञ्जीर या टोस्ट और चाय। इनमें से एक दिन एक ही चीज।

दोपहर का भोजन—रोटी, मक्खन या घी। दाल, सब्जी हरे शाक कच्ची अवस्था में ही जैसे मूली, टमाटर, सलाद।

शाम का भोजन—पूड़ी या पराठे और शाक। शाम के भोजन के बाद कम से कम ३ घंटे बाद सोना चाहिए और प्रत्येक अवस्था में सोने के समय को रात के १० या ११ बजे के बाद न टालना चाहिए। इसलिए शाम का भोजन ७ या ८ बजे के पहले कर लेना चाहिए। सोने से पहले कोई भारी चीज कदापि न खानी चाहिए। अधिक से अधिक आप दूध या मट्ठा पी सकती हैं।

फिर कम से कम ८ या १० घंटा प्रति दिन गहरी नींद सोना चाहिए। यदि आपका भोजन ठीक है, मन चिन्ता हीन है और दिन में आपने उत्साह से अपना काम किया है तो निश्चय ही आपको गहरी नींद लगेगी। इससे शरीर
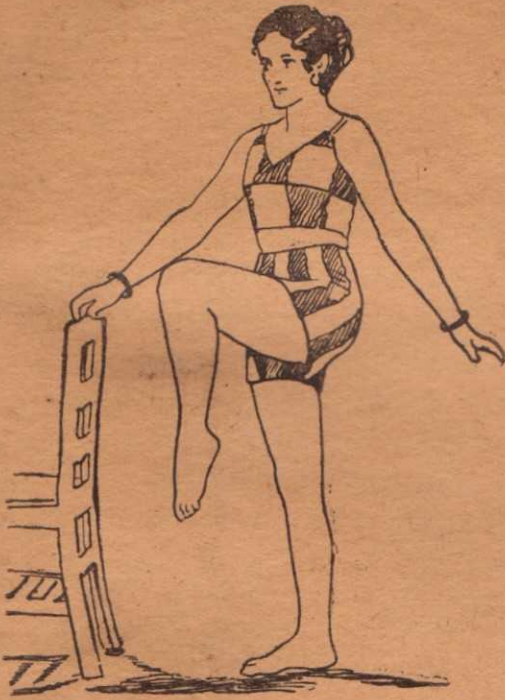
एक हाथ से कुर्सी पकड़ो। बायाँ पैर आगे की ओर ऊपर उठाओ। फिर उसे पीछे ले जाओ और तानो। यही व्यायाम दाहिने पैर से करो।

कुर्सी पर पेट के बल लेटो। हाथों से उसके पावे पकड़ो। दोनों पैरों को मिला कर एक साथ उठाओ और तानो। यही व्यायाम एक एक पाँव से करो।
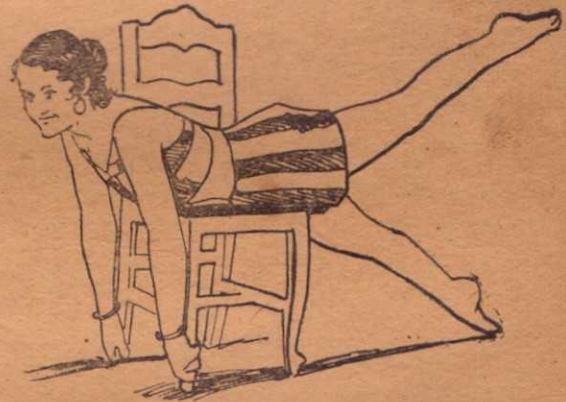
की शक्ति बढ़ती है और वह स्वस्थ, सुडौल और सुन्दर हो जाता है। एक व्यायाम बताती हूँ जिसे आप अपने कमरे में अकेली कर सकती हैं। एक कुर्सी रख लीजिए। उसकी पीठ पर हाथ रख कर खड़ी हो जाइए। सारा बल दाहिने पैर पर दीजिए और बाँया पैर उठाइए। इसके बाद इसे पीछे ले जाइए और तानिए। फिर सीधी खड़ी हो जाइए और बाँए पैर पर बल देकर यही व्यायाम दाहिने पैर से कीजिए। इससे आपकी टाँगे और पेड़ू सुडौल होंगे। पेट, पीठ, धड़ और भुजाओं के लिए पेट के बल कुर्सी पर लेट जाइए।

दोनों हाथों से कुर्सी के एक ओर के दोनों पाये पकड़ लीजिए। दोनों पैरों को सीधा तानिए। फिर एक पैर तना रहे और दूसरे को नीचे गिराइए यहाँ तक कि वह फर्श छू ले। फिर यही क्रिया दूसरे पाँव से कीजिए। यहाँ जो चित्र दिये जा रहे हैं, उन्हें ध्यान से देखिये, सब समझ में आ जायगा।

मेरी हार्दिक इच्छा है कि हम सभी स्त्रियाँ अत्यन्त स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट हो जायँ। क्योंकि हमारे ही स्वास्थ्य पर हमारी संतानों का स्वास्थ्य निर्भर है। इस प्रकार जो स्त्री अपना स्वास्थ्य ठीक रखती है वह मानों राष्ट्र की सबसे बड़ी सेवा करती है।

"दीदी" की पाठिकाओं से निवेदन है कि वे इस लेख के अनुसार अपना स्वास्थ्य सुधारना शुरू कर दें। यदि कोई बात समझ में न आवे तो मुझसे पूछें। मैं उत्तर दूँगी।

—श्यामाबाई

भोजन के साथ पानी पीना

प्रश्न—भोजन के साथ पानी पीना क्या हानिकारक है? क्या इससे हाजमा बिगड़ जाता है?

उत्तर—यह पुराना प्रश्न है। जल्दी जल्दी पानी के घूँट भोजन पेट में उतार ले जाने की आदत जरूर बुरी है। क्योंकि इस प्रकार भोजन ठीक से चबाया नहीं जा सकता। परन्तु यदि भोजन करते समय प्यास मालूम हो तो पानी जरूर पीना चाहिए। मेदे में बिना यथेष्ट पानी पहुँचे भोजन ठीक से हजम नहीं हो सकता। यदि यह पानी न पहुँचेगा तो मेदा भोजन को हजम करने के लिए रक्त में से पानी ले लेगा और वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होगा। इसलिए अच्छा सिद्धान्त यही है कि भोजन के समय प्यास लगे तो पानी पीना चाहिए। यदि भोजन आरम्भ करते समय प्यास मालूम हो तो पहले पानी पीकर फिर भोजन आरम्भ करना चाहिए।

शिशु जन्म में कष्ट

प्रश्न—ईश्वर ने चाहा तो तीन महीने बाद मैं एक शिशु को जन्म दूँगी। परन्तु मैं बहुत डर रही हूँ कि अत्यन्त पीड़ा होगी। क्या करूँ कि कम कष्ट हो?

उत्तर—शिशु जन्म के समय सारी मुसीबत शहरों में और आधुनिक सभ्य घरों में ही देखी जाती है। देहातों में स्त्रियों के चलते फिरते बच्चे होते हैं और उन्हें कोई कष्ट नहीं होता। इसका कारण यह है कि वे प्रकृति के अधिक नजदीक हैं। शिशु जन्म बिना तकलीफ के हो, इसके लिए स्तनों की साधना चाहिए। परन्तु हाँ, तीन महीना भी आप सावधानी से रहेंगी तो बहुत कुछ लाभ होगा। पहला काम आप यह करें कि हलकी चीजें खाएँ। फल व शाक अधिक खायें कम से कम एक संतरा रोज प्रातः काल खायें और प्रतिदिन थोड़ा टहलें। अपना मन प्रसन्न रक्खें, बस।

श्वेत प्रदर

प्रश्न—श्वेत प्रदर क्या बला है। मैं इसे कैसे अच्छा करूँ? जान पड़ता है कि मुझे यह रोग हो गया है। मेरी अवस्था अभी कम ही है। कृपया मेरा नाम प्रकट न करें और उत्तर "दीदी" में छापें।

उत्तर—यह कोई ऐसा रोग नहीं जिसको छिपाने की जरूरत हो। आप इसका जिक्र अपने घर की वयस्क महिलाओं से कर सकती हैं और इसके बारे में किसी लेडी डाक्टर से भी सलाह ले सकती हैं। शुरू में इलाज न करने से यह रोग आगे चल कर कष्ट देता है। उचित यही होगा कि आप इस सम्बन्ध में अपने घर के लोगों को सूचित कर दें और किसी योग्य लेडी डाक्टर से राय लें।

यों भी यह रोग अच्छा किया जा सकता है पर धैर्य से काम लेना पड़ेगा और वक्त लगेगा। इसके लिए आपको सबसे पहले अपना स्वास्थ्य सुधारना पड़ेगा। आप स्वादिष्ट पौष्टिक भोजन करें, प्रातः काल टहलें या कोई व्यायाम करें, पानी काफी मात्रा में पिएँ और सफाई रक्खें। थोड़ा गर्म पानी में लाल दवा (परमैगनेट आफ पोटाश डाल लें) उससे धोवें। धीरे धीरे आपको आराम हो जायगा।

एक दुःखान्त कहानी

आश्रयहीना

लेखिका, कुमारी सरला माथुर

जिन्होंने जीवन में कभी दुख का नाम नहीं सुना, वह दुख भरी कथा सुनते ही रो देते हैं। चन्द्रा तो रोते रोते सुना ही रही थी और राजकुमारी सुनते सुनते रोने लगी। पति की मृत्यु के बाद सास भी रोते रोते इस संसार से चली गई। माँ पहले ही जा चुकी थी, पिता को सुनते हैं बिमार है। वह अभागी थी। दूर के जेठ जिठानी के यहाँ पल रही थी। दिन रात काम करने पर भी उसे हजारों सुननी पड़तीं। दो वर्ष की मुन्नी ही उसके जीवन का सहारा थी।

राजकुमारी ने कहा—"भाभी तुम अपने पीहर क्यों नहीं चली जाती हो।"

चन्द्रा—"दीदी, जब विवाह हुआ था माँ ने कहा था कि तेरा घर वही है, अब इस घर को छोड़ कर कैसे चली जाऊँ।"

'भाभी, इस घर में अब तुम्हारा रह ही क्या गया है।"

"क्या करूँ ? भाग्य ही ऐसा है। वहाँ एक भाई है और पाँच बहिनें अविवाहित हैं। भाई किस किस को देखेगा ......।"

चन्द्रा कहते कहते रुक गई। बाहर से क्रोध में भरी यशोदा ने आकर कहा—"बहू सारे दिन बैठे बैठे काम नहीं चलेगा। चल जरा देख सारा दूध उबल गया है। जरा सा काम भी नहीं होता। हमारा क्या जाता है, तेरी ही मुन्नी को सारे दिन दूध चाहता रहता है।"

चन्द्रा भयभीत होकर बाहर चली गई। यशोदा नाक चढ़ा कर बोली—"देखो जी, हम तो कभी काम को कहते ही नहीं और जब कभी कह भी देते हैं तो ऐसा ही काम करती है।"

"भाभी को मैंने ही बुलाया था।" राजकुमारी ने धीरे से कहा—"परन्तु मैं छोटी भाभी से कह आई थी कि वह दूध देख ले।"

"वह तो काफी छोटी है परन्तु इससे कभी कुछ काम नहीं होता।"

"मैं जब उन्हें देखती हूँ काम करते ही देखती हूँ।" राजकुमारी ने कुछ क्रोधित होकर कहा।

"यही कहती होगी।" यशोदा ने बिगड़ कर कहा—"सास मर गई रानी ने पत्ता भी नहीं हिलाया, हमसे किसी का दुख देखा नहीं जाता। रात दिन जाग कर उनकी सेवा की है।"

राजकुमारी ने व्यङ्ग कसते हुए कहा—"भाभी यह तो सब जानते हैं जितना काम तुम करती हो, उतना और कोई नहीं कर सकता।"

यशोदा प्रसन्न होकर बोली—"नहीं मैं क्या काम करती हूँ।"

"तुम्हें तो ऐसा कहना ही शोभा देता है। परन्तु मैंने आज तक तुम जैसा काम करने वाला नहीं देखा।"

यशोदा की प्रसन्नता की सीमा न रही। राजकुमारी हँसते हुए अपने घर की ओर चल दी। उसे दूसरों के झगड़ों से क्या लेना।

× × ×

चन्द्रा आँसू पोंछते हुए बुहारी देती जा रही थी। दूर पर बैठी यशोदा बड़बड़ा रही थी। चन्द्रा क्या करे ? जन्म से ही बराबर वह तिरस्कार तथा अवहेलना का सामना करती आ रही थी। वह स्त्री थी, शायद यही उसका सबसे बड़ा अपराध था। माता पिता के लिए कन्या बरदान नहीं, अभिशाप है, वह क्यों कर उसका सन्मान करते। विवाह हुआ, दो तीन वर्ष सुख में व्यतीत हुए परन्तु वह अभागी थी, आश्रयहीन हो गई। उसे अपनी तनिक चिन्ता नहीं थी—चिन्ता थी केवल मुन्नी की।

यशोदा देवी ने अन्त में कह ही दिया—"अब घर में जगह कम है। तुम थोड़े दिनों के लिए मायके चली जाओ तो अच्छा है।"

विवश होकर चन्द्रा को मायके जाना पड़ा। पिता अन्तिम साँस गिन रहे थे, अभागी कन्या को देख कर वह अन्तिम साँस भी ले ली। चन्द्रा—उसकी आँखें सूखी थी—आँसुओं ने भी साथ छोड़ दिया। वह चुपचाप सब सहती रही। भाई की अवहेलना, भाभी की फटकार तथा बहनों की क्षीन दृष्टि सब कुछ उसने सहा—सहनशीलता की भी सीमा होती है। चन्द्रा ने उस घर को जहाँ पर उसका जन्म हुआ

था छोड़ दिया। उससे किसी ने "जा" नहीं कहा — किसी ने निकाला नहीं, वह स्वयं चली गई। वह अशिक्षित थी और जीविका के साधनों से अपरिचित थी। वह नारी थी, लज्जा के पल्ले में बँधी हुई थी। परन्तु लाज शर्म को छोड़ कर वह भीख पर निर्वाह करने लगी।

कृष काया, वह शीश झुकाए, गोदी में मुन्नी को लेकर चुपचाप दाता के पास जाकर खड़ी हो जाती। कोई काम करने का उपदेश देता, कोई दुतकार देता, परन्तु दानियों की कमी नहीं, खाने योग्य मिल ही जाता है।

चन्द्रा सड़क पार कर रही थी, सामने से मोटर बड़ी तेजी से आ रही थी। हार्न ने बार बार चेतावनी दी परन्तु जिसके सिर पर काल नाच रहा हो उसके लिए सब व्यर्थ। मोटर रुक गई, लोगों की भीड़ पास आकर खड़ी हो गई, चन्द्रा का शरीर लहू से लतपथ था, मुन्नी दूर पर पड़ी हुई—भयभीत होकर चारों ओर देख रही थी।

संसार में धन सब कुछ कर सकता है। मोटर निर्दोश निकल गई। मृतक शरीर पुलिस के हाथों सौंप दिया गया। मुन्नी चकित थी—भीड़ चिन्तित थी। एक मोटर गई, दूसरी आर गई। राजकुमारी ने देखा मुन्नी को—आगे बढ़ कर मुन्नी को उठाते हुए वह सोचने लगी उस बालिका के प्रति अपना कर्तव्य।

बच्चों की बातें

मेरा ढाई साल का बच्चा मेरे पास बैठा दूध पी रहा था। मेरे पति ने उसके पास आकर प्यार से कहा—'चलो हम तुम भाग चलें। माँ को यहीं रहने दो।'

बच्चा बोला—'ठहरो! मैं दूध पी लूँ तब भागो।'

—रमा श्रीवास्तव

हमारे गाँव में एक रात्रि पाठशाला खुली है। मेरा छोटा लड़का जो आठ साल का है, आकर बोला—'पिता जी! मैं भी रात्रि पाठशाला में पढ़ने जाऊँगा।'

'क्यों?' मैंने आश्चर्य से पूछा।

वह बोला—'तब सारा दिन खेलने को मिलेगा।'

—शिवकुमार त्रिपाठी

बेसन का मालपुआ

सामान—आध सेर अच्छा ताजा बेसन, पाव भर शक्कर का शर्बत, पाव भर दूध, किशमिश, गरी, चिरौंजी, छोटी इलायची के दाने, जरा सी सौंफ।

विधि—बेसन में शर्बत और दूध मिला कर खूब फेंटे मेवे भी मिला दे। जब फिट जाये तब पतीली में घी गर्म करके करछुल से बेसन उसमें डाले। लाल सिंक जाने पर निकाल ले। सेंकने में तेज आँच न रहे।

—सुशान्ता कुमारी सिनहा

कमजोर दाँत वालों के लिए रोटी

जिनके दाँत कमजोर हो जाते हैं वे रोटी को चबा कर नहीं खा सकते। सारी उम्र रोटी खाने के कारण वे दूसरी चीज खाना भी पसन्द नहीं करते। उनके सामने रोटी किस तरह रखी जाय कि वे शिकायत न करें। एक तरकीब यह है कि रोटी सेंकने से पहले एक चौड़े मुँह के बर्तन में थोड़ा सा जीरा जल रख लो। रोटी सेंक सेंक कर उसमें डालती जाओ। १५ मिनट रोटी को भीगने दो। १५ मिनट बाद रोटी इतनी मुलायम हो जायगी कि बिना दाँत वाले भी उसे खा सकेंगे। रोटी भिगोने का जीरा जल बनाने की तरकीब यह है। एक बटलोई में जरा सा घी डालो। जब घी गर्म हो जाय उसमें एक चुटकी जीरा डाल दो। जीरा कड़कड़ाने लगे तब एक गिलास पानी डाल दो। पानी उबल आए तो उतार कर एक बर्तन में रख लो और जरा सा नमक डाल दो। उसी में रोटी भिगोओ।

—विमला जायसवाल

कच्चे केले के बड़े

कच्चे केले उबाल कर बारीक पीस लो। उसमें अन्दाज से हरा धनिया, हरी मिर्च कतर कर डाल दो। थोड़ी चीनी व नमक भी डाल दो। फिर सब को एक में मिला कर घी या तेल से सेंक लो। इसे गरम ही गरम खाना चाहिए। ठंडे खराब हो जाते हैं।

—कुमारी सावित्री भार्गव नेरल

'बा' के अन्तिम दर्शन

लेखक, श्री देवदास गाँधी

माता कस्तूर बा गाँधी के स्वर्गारोहण के समय उनके सबसे छोटे पुत्र श्री देवदास गाँधी भी उनके समीप उपस्थित थे। वे ही उनकी अस्थियाँ लेकर प्रयाग पधारे थे। रेल की लम्बी यात्रा में उन्होंने 'बा' की अन्तिम घड़ियों का जिक्र करते हुए बड़ा ही मार्मिक लेख लिखा था। वह यहाँ दिया जा रहा है।

माँ के निधन पर मुझे तथा पूज्य बापू को जो असंख्य समवेदना सूचक सन्देश मिले हैं उनका आभार मान कर ही रह जाना पर्याप्त प्रतीत नहीं होता, कारण समवेदना प्रकट करने वालों का शब्द-विन्यास भले ही सुन्दर रहा है पर वे हृदय की सारी भावनाएँ व्यक्त नहीं कर पाये हैं। अतः मेरे लिए यह अनुचित होगा यदि माँ के अन्तिम काल की अमूल्य और पावन स्मृतियाँ अपने तक ही सीमित रखूँ।

अन्तिम क्षण तक माँ ने सर्वांश में अपनी चेतना नहीं खोयी। रविवार को जब सरकारी विज्ञप्ति में उनकी हालत अत्यधिक चिन्ताजनक होने की घोषणा की गई तब भी वे बीमारी से मुक्ति पा जाने और जीवित रहने की आशा कर रही थीं। हृद्गति अत्यन्त मन्द पड़ जाने के कारण अन्तिम कई दिनों से उनके गुर्दों ने काम करना छोड़ दिया था और इसी में बिना ज्वर का निमोनिया भी शामिल हो गया था। डाक्टरों ने सारी आशा त्याग दी थी। सोमवार की शाम को जब मैं पहुँचा तो वे जिस कष्ट में थीं। उसे उनके सहयोगी नजरबन्द ही अपनी अनवरत सेवा द्वारा किसी अंश में दूर करने में समर्थ थे। डाक्टरों ने तो उस रात उनके बचने की सारी आशा छोड़ दी थी। अर्धचेतनावस्था में वे टूटे फूटे शब्दों में अथवा धीरे से अपना सिर हिला कर प्रश्नों का उत्तर देतीं थीं। एक बार बापू जब उनके समीप पहुँचे तो उन्होंने हाथ उठा कर पूछा—"कौन हैं ये?" और जब वे [बापू] लगभग एक घण्टे तक उनकी सेवा में तल्लीन रहे तो उन्हें [माँ को] बड़ा आराम जान पड़ा। यद्यपि बापू के हाथ हिलते थे परन्तु वे माँ से उम्र में कई साल छोटे जान पड़ते थे। इस दृश्य को देख कर मुझे ३२ वर्ष पूर्व की स्मृति हो आयी जब दक्षिण अफ्रीका में तीन मास के कारावास के उपरान्त वे बिलकुल अस्थिपञ्जर होकर बाहर आयी थीं। उस समय एक परिचित यूरोपियन ने एक रेलवे स्टेशन पर बापू और माँ से भेंट करते हुए कहा था,—'गाँधी जी, ये क्या तुम्हारी माँ है?"

प्रातःकाल माँ की हालत पहले से खराब लगी परन्तु वे अधिक शान्त जान पड़ीं। सोमवार को वे एक क्षीण आशा में चिपटी जान पड़ी थीं परन्तु मंगलवार को ऐसा जान पड़ा

कि उन्होंने जीवन की आशा का सर्वथा परित्याग कर दिया था।

माँ ने दवाओं का और यहाँ तक कि पानी तक का लेना, सोमवार से ही बन्द कर दिया था परन्तु मंगलवार को दोपहर के समय एक बूँद गंगाजल के लिए अवश्य ही उन्होंने मुख खोला। इससे उन्हें थोड़ी देर के लिए शान्ति मिली। शाम को तीन बजे के लगभग उन्होंने मुझे बुलाया और बोलीं—मैं जा रही हूँ। मुझे एक दिन तो जाना ही है फिर आज ही क्यों न जाऊँ? मैं, उनकी अन्तिम सन्तान, उन्हें पकड़े था, परन्तु इन तथा कुछ और मीठे शब्दों के साथ सबके सम्मुख वे मुझे छोड़ कर चली गयीं। उनकी वाणी मुझे इतनी स्पष्ट और प्रिय कभी न लगी थी।

इसके बाद ही उन्होंने अपने हाथ जोड़ लिए, बिना किसी की सहायता के वे उठ बैठीं और कई मिनट तक सिर झुका कर उन्होंने अपने उच्च स्वर में बार बार प्रार्थना की—

"प्रभु रक्षा करो हमारी,
मैं हूँ प्रभु शरण तिहारी!"

जब मैं अपने आंसू पोंछने के लिए दूसरे कमरे में गया तो आगा खां के महल के बरामदे में 'पेंसिलिन' आ गयी थी। निमोनिया की यह आश्चर्यजनक औषधि तैयार की गयी है।

पाँच बजे के लगभग माँ के समीप पहुँचने का साहस मैंने पुनः बटोरा। इस बार वे मुस्करायीं। वह मुस्कराहट, जिसने मेरे इन ४३ वर्षों के जीवन को बनाया बिगाड़ा है। माँ की मृत्यु शैय्या पर की वह मुस्कराहट चलते समय पुत्र को प्रसन्न करने के लिए थी। माँ अत्यधिक मात्रा में मानवी थीं।

जो हो, इस मुस्कराहट ने पेंसिलिन की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया और मैंने इस सम्बन्ध में डाक्टरों से परामर्श करना उचित समझा। वे इसका प्रयोग करने के लिए तैयार थे पर उसकी सफलता में उन्हें कम विश्वास था।

जब बापू को पता चला कि मैं माँ को कष्ट दायक इञ्जेक्शन दिलाने को तैयार हो गया तो उन्होंने बगीचे का अपना सांध्यकालीन भ्रमण स्थगित कर दिया और मुझसे आकर बोले—'भले ही तुम आश्चर्यजनक औषध को उसके शरीर में प्रविष्ठ करा दो परन्तु अब तुम अपनी माँ को अच्छा नहीं कर सकते। मुझ पर तुम जोर देते तो भले ही मैं स्वीकार कर लेता परन्तु उसके सम्बन्ध में तुम्हारा ऐसा आशा करना सर्वथा व्यर्थ है। इधर दो दिन से उसने दवाएँ लेना, यहाँ तक कि पानी भी लेना, बन्द कर दिया है। अब वह ईश्वर के हाथों में है। यदि तुम चाहो तो भले ही इसमें दखल दो परन्तु मैं इसकी सलाह नहीं देता। और यह स्मरण रखो कि मृत्यु शैय्या पर पड़ी माँ को तुम हर ४, ६ घण्टे पर इञ्जेक्शन देकर भारी शारीरिक कष्ट पहुँचाओगे। अब मैं क्या तर्क करता? इससे डाक्टरों को भी सन्तोष हुआ। बापू के साथ मेरा यह सबसे सुन्दर स्नेह विवाद जैसे ही समाप्त हुआ था कि माँ ने उन्हें बुला भेजा। वे तुरन्त ही वहाँ जा पहुँचे और जो लोग माँ को थामे थे उनके हाथों से उन्होंने माँ को ले लिया। उन्होंने उन्हें अपने कन्धे के समीप रख कर अधिक से अधिक आराम पहुँचाने की चेष्टा की। मैं अन्य लोगों के साथ माँ के चेहरे की ओर देख रहा था कि उनके चेहरे की छाया गम्भीरतर होती जा रही है और वे कुछ कहती हुई अपनी बाहें हिलाती डुलाती हुई पूरा-पूरा सहारा पाने का प्रयत्न कर रही हैं।

बस, पलक मारते ही विदा की वेला आ गई। कितनी ही आँखों से आँसू ढुलक पड़े परन्तु बापू ने उन्हें बलपूर्वक रोक रखा। सब लोग अर्धवृत्ताकार खड़े हो गये और उनका प्रिय भजन गाने लगे। दो मिनट में सब समाप्त हो गया। नजरबन्द शिविर के एक निवासी ने मुझे बताया कि वे हमारे भोजन की समाप्ति के लिए रुकी थीं। वहाँ पर सब लोग शाम के ६ बजे तक भोजन कर लेते हैं। सायंकाल ७ बज कर ३५ मिनट पर उनका देहावसान हुआ।

मैं प्रयाग के मार्ग में ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ। उनकी थोड़ी सी अस्थियाँ मेरे साथ हैं। सोमवार को भागीरथी में इनका प्रवाह होगा। बापू की इच्छा इनका प्रवाह त्रिवेणी सङ्गम पर करने की थी। उन्होंने मुझसे कहा कि 'करोड़ों हिन्दू जिसे धार्मिक विधि समझ कर करते हैं उससे तुम्हारी माँ को सन्तोष होगा।' जब इस सम्बन्ध में श्रद्धेय मालवीय जी का तार मिला तो यह निश्चय और पक्का हो गया।

नजरबन्द शिविर में माँ सितम्बर १९४२ से बीमार थीं। उसी समय पहली बार हृद्‌रोग के लक्षण जान पड़े।

यद्यपि वे गत ४, ५ वर्ष से अस्वस्थ रहा करती थीं परन्तु हृदरोग उन्हें कभी न हुआ था। परन्तु सितम्बर १९४२ में बीमार पड़ने के बाद वे कभी पूर्णतः स्वस्थ न हुईं। यह कहना अत्युक्ति नहीं कि कारावास का कष्ट झेलने के उपयुक्त न तो उनका शरीर ही रह गया था न मस्तिष्क। वे पहले भी कैद रहीं थी। मुख्यतः राजकोट के एक गाँव में उन्हें जब तनहाई का दण्ड मिला था तो उनकी हालत बहुत खराब हो गई थी। परन्तु इस बार का कारावास तो उनका प्राण ही लेकर माना। 'महल' का वातावरण उनके लिए विरोधभास था। उसके बाहर तारों के घेरे और सन्तरियों ने उसके चित्र में पूरा रङ्ग भर दिया था। गतवर्ष उन्होंने मुझसे कहा था कि मेरी इच्छा होती है कि सेवा ग्राम की छोटी छोटी कुटियों में लौट जाऊँ। अनिश्चित काल की नजरबन्दी की बात का उन पर और गहरा प्रभाव पड़ा था और कितने भी सुख उनकी आत्मा और मस्तिष्क को शान्ति प्रदान न कर सकते थे। असंख्य अन्य नजरबन्दों के, जिनमें कितने ही व्यक्ति उनके निकट घनिष्ट रूप से परिचित थे, कष्टों का विचार उनको और भी पीड़ित करता था और इधर १॥ वर्ष से वे मूक प्रार्थना करती थीं कि यदि सम्भव हो तो मैं (माँ) और बापू स्थायी रूप से नजरबन्द कर लिये जायँ और अन्य सब लोग जेल से रिहा कर दिये जायँ।

अपने तीन भाइयों, परिवार के अन्य सदस्यों तथा अपनी ओर से मैं उन सब लाखों भाई-बहिनों के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने हमारे पास समवेदना के सन्देश भेजे हैं अथवा चुपचाप हमारे दुःख में हाथ बटाया है।

बापू के सम्बन्ध में दो शब्द और। इस दुखद घटना के कारण वे बड़े थके से दीख पड़ रहे थे। उन्हें इसका दुःख है। कारण वे आज जो कुछ है उसका बहुत अधिक श्रेय माँ को है। परन्तु उनमें दार्शनिक की शान्ति है और वे अपने भावों पर अपने अनुरूप ही नियन्त्रण रखते हैं। शुक्रवार को मैं तथा मेरे भाई जब उनसे विदा होने लगे तो आँसुओं के स्थान पर वे हमारे साथ सदा की भाँति विनोद कर उठे। मेरे विचार से उनका स्वास्थ्य अच्छा है।

कस्तूर बा गाँधी स्मृत कोष

महामना पण्डित मदनमोहन मालवीय के नेतृत्व में कोई ४० प्रमुख नेताओं की ओर से यह कहा गया है कि एक कस्तूर बा गाँधी स्मृति कोष स्थापित किया जाय जिसमें समस्त देश से ७५ लाख रुपये एकत्र किये जायँ और ये रुपये महात्मा गाँधी को उनकी ७५वीं वर्ष गाँठ पर भेंट किये जायँ। ये रुपये देश की लड़कियों को ऐसी आदर्श शिक्षा देने में व्यय किये जायँगे कि वे बड़ी होने पर माता कस्तूर बा जैसी आदर्श नारी बनें।

माता कस्तूर बा की चूड़ियां

आगा खाँ पैलेस में माता कस्तूर बा के चिता की राख जब बटोरी गई तब उसमें से पाँच साबूत चूड़ियाँ निकलीं। वे चूड़ियाँ उनकी पौत्री को पहना दी गईं।

गूढ़ार्थ सवैया

गत मार्च मास की दीदी में एक गूढ़ार्थ सवैया छपा था। उसके अनेक सही उत्तर हमारे पास आए हैं—सारी करामात "कबहूँ न" शब्द पर है। इसे सवैया के प्रत्येक चरण के प्रथमार्द्ध के साथ मिला कर पढ़ने से सही अर्थ निकल आता है। जैसे—

कंज मरे रवि के दर से कबहूँ न; मरे वह चंद्र दिखाए।
मीन मरे जल के परसे कबहूँ न; मरे वह पावक पाए।
नारि मरे पिय के दरसे कबहूँ न; मरे परदेश सिधाए।
संत जो पाप करैं तो तरैं कबहूँ न; तरैं हरि के गुन गाए।

यह सही अर्थ निम्नलिखित व्यक्तियों ने भेजाः—

सर्वश्री रामसिया 'रमेश', हिंगोली। निर्मलागुप्ता, अलीगढ़। कृष्णसांडल, नई दिल्ली। अनलप्रभा, खैरागढ़राज। गायत्री वर्मा, लखनऊ। रमेशचन्द्र शुक्ल, कामठा। भीमसिंह नाहरा, छापर। कु० शारदा मिश्रा गंधौली। रामेश्वरनाथ तिवारी। कीर्ति सेठ, बदायूँ। स० अरजनसिंह, आसाम। ज्ञानवती अदीब।

एक कहानी

पराठे

लेखिका, कुमारी पुष्पलता, कुर्री सुदौलीराज

[१]

दिल्ली में फोर्ट पार्क प्रसिद्ध स्थान है। बीमारी की हालत में, जब कमला शङ्कर दिल्ली दवा कराने गया तो वहीं 'पार्क विउ बिल्डिङ्ग' में स्थान मिला। उसका कमरा ऊपर की मञ्जिल में था। और लोग भी बगल के कमरों में रहते थे। जीने के सामने ही कमरा होने के कारण वह लोगों को आते जाते देख सकता था।

आने जाने वालों में न जाने क्यों कमल उस लड़की की प्रतीक्षा किया करता जो सुन्दर है और सुन्दरता से अधिक भोली है।

कमल के हृदय में उस लड़की के लिये स्थान सा बन रहा था। पर वह लाचार था। उसके मिलने वालों में केवल डाक्टर साहब थे जो उसका इलाज करते थे और दीनू था। दीनू उसका घरेलू और पुराना नौकर था। वही उसे खाना पीना बना देता। वही दवा आदि का प्रबन्ध करता। बचपन में कमल को वही खेलाता भी था। कमल उसका आदर करता था। कमल का दिन दीनू से बातें करने में ही व्यतीत होता।

धीरे धीरे वह इस योग्य हो गया कि डाक्टर साहब ने उसे पलङ्ग के बाहर आने की इजाजत दे दी। अब वह कमरे से निकल कर छज्जे पर खड़ा हो जाता और जेल से छूटे कैदी की भाँति सभी वस्तुओं को अपरिचित सा देखता रहता। उसे गाने का शौक था। वह सिनेमा के गाने तो ऐसे गाता जैसे बिना बाजे का रेकार्ड बज रहा हो। एक दिन वह छज्जे पर खड़ा गा रहा था कि एक अधेड़, छरहरे गोरे रङ्ग के महाशय उसके नजदीक सुनते सुनते पहुँच ही गये। कमल उनकी सूरत से तो जानता ही था। चप पाते ही गाना बन्द कर दिया।

"गाइये; गाइये; आप गाते तो बहुत अच्छा हैं। आपने बन्द क्यों कर दिया?" उन महाशय ने कहा और उसके मुँह की तरफ देखने लगे।

कमल कुछ हिचकिचाता सा बोला, "जी नहीं, कुछ ऐसे ही गा लेता हूँ। अच्छा क्या गाता हूँ?"

अधेड़ व्यक्ति ने कुछ मुस्कराते हुये कहा, "मैंने तो आज ही आपका गाना सुना है। ऐसे तो मैं जानता हूँ कि आप बीमार हैं और मेरे बगल के ही कमरे में रहते हैं।"

"जी, अब तो मैं अच्छा हूँ। लेकिन आपको कैसे ज्ञात हुआ कि मैं बीमार हूँ।" कमल ने कहा! "जो डाक्टर आपकी दवा करते हैं वही मेरे यहाँ भी जाते हैं। उन्हीं से मालूम हुआ। बात यह है कि बर्मा-पतन के बाद भागने में रास्ते में जो तकलीफें उठानी पड़ी, उनसे मेरी लड़की और बीबी की तबियत खराब हो गई। लड़की तो अच्छी हो गई, स्कूल जाती है। किन्तु वह अभी अच्छी नहीं हुई।"

"तो आप बर्मा से भाग कर आये हैं।" कमल चकित सा बोला, "तो आप को रास्ते में तकलीफें भी बहुत उठानी पड़ी होगी?"

"जी हाँ! कुछ मत पूछिये साहब। दिल ही जानता है। "वह इतना ही कह पाया था कि आवाज आई "पापा जी, पापा जी। आइये।" आवाज सुरीली थी। कमल ने देखा और देखा उसे—जिसे किताबों के साथ स्कूल आते जाते समय वह देखने को लालायित रहता था। वह व्यक्ति यह कहते हुये। "अच्छा फिर मिलूँगा। हाँ यह कहने को तो भूल ही गया कि यह मेरी लड़की इन्द्रा है। बड़ी सीधी है। यह अच्छी हो गई है।" चल दिया। रामू किन्हीं विचारों में मग्न अपनी चार पाई की ओर जा रहा था।

[२]

अब कमल और अधेड़ व्यक्ति साहनी से काफी घनिष्ठता हो गई थी। वह जब शाम को रेलवे आफिस से थका माँदा आता तो पहिले कमल के कमरे में जाता और एक आध गाना सुन कर चाय पीने अपने कमरे में आता। वह कमल को भी चाय पिलाने ले जाता। चाय इन्द्रा ही बनाया करती थी।

साहनी परिवार से परिचय होने पर भी कमल इन्द्रा से न बोलता। इन्द्रा भी कमल से न बोलती। किन्तु जब कभी आखें चार हो जातीं तो इन्द्रा घबड़ा सी जाती। उसके गाल लाल हो जाते। कमल का हृदय धड़कने लगता। वह दोनों एक दूसरे के निकट आना चाहते थे। पर सवाल था, कदम

कौन आगे बढ़ाये ? कमल सोचता 'कहीं बुरा न मान जाय।' इन्द्रा में लज्जा थी। वह लाचार थी।

एक दिन साहनी-साहब ने इन्द्रा को कुछ हिन्दी पढ़ा देने के लिये कमल से कहा। इन्द्रा का दसवाँ दर्जा था वह बर्मा से आई थी। हिन्दी बहुत कम जानती थी। कमल उसी दिन से इन्द्रा को पढ़ाने लगा। इन्द्रा उसी के कमरे में पढ़ने जाया करती।

पहिले तो दोनों एक दूसरे से झिझकते, पर धीरे धीरे झिझक जाती रही। एक दिन शाम को कमल पढ़ा रहा था। एक-बयक इन्द्रा ने कहा—"रेकार्ड बाबू।" वह कमल को रेकार्ड की तरह गाना गाने के कारण रेकार्ड बाबू ही कहती।

कमल ने कहा—"हाँ कहो इन्द्रा।"

"पराठे बना लाऊँ, आज खाइयेगा।" इन्द्रा ने नीची निगाह करके कहा।

"नहीं। क्यों पराठे कैसे ?" ताज्जुब से कमल ने कहा—

"आपही तो कल दीनू से पराठे बनाने को कहते थे। पर बने नहीं।" इन्द्रा ने कहा।

"लेकिन वही बना देगा।"

"तो आप दूसरों का दिल तोड़ना जानते हैं।" इन्द्रा की आवाज में एक पीड़ा थी।

"क्यों इन्द्रा ? कैसे ?" कमल सन्न हो गया।

"यह भी कुछ कहने की बात है। क्या आप इतना भी नहीं समझते हैं ?"

"समझता हूँ इन्द्रा। पर लाचारी है।" कमल गंभीर हो गया।

"क्या लाचारी है ?" इन्द्रा उसके मुँह की ओर देख रही थी।

"यही कि मैं विवाहित हूँ।"

"झूठ कमल बाबू। बहाना क्यों करते हो।" उसकी आवाज में तेजी थी।

"नहीं यह सच है। न मानो तो यह देख लो मेरी बीबी का खत।" और लिफाफा जेब से निकाल कर दे दिया।

इन्द्रा पत्र खोल ही रही थी कि तार वाला आ गया। कमरे में सर डाल कर पूछा—क्या कमला शंकर जी आप ही हैं ?"

"हाँ मैं ही हूँ।" कमल ने उत्सुकता से जवाब दिया।

"लीजिये अपना तार।" और फार्म पर दस्तखत करा कर चला गया।

इन्द्रा ने पूछा—"किसका है ?"

"पता नहीं। खोलूँ तो पता चले।"

"कहाँ से आया है ?" इन्द्रा ने पूछा।

"उसकी तबीयत बहुत खराब है।" कमल ने धीरे से कहा, और तार मेज पर रख दिया।

तार उठाते हुये इन्द्रा ने कहा—"तो।"

"आज रात की साढ़े ग्यारह वाली गाड़ी से जाऊँगा।"

"पराठे नहीं खाइयेगा ?"

"नहीं इन्द्रा।"

"क्यों ?"

"इसलिये कि जब कभी मैं पराठे खाऊँ तो तुम्हारी याद आये कि तुम पराठा खिलाने को कहती थीं पर मैंने नहीं खाया। और तुम्हें मेरी याद बनी रहे कि तुम खिला न सकीं। ऐसे तुम भूल जाओगी।"

"और तुम ?" इन्द्रा ने आशंका से पूछा।

"मैं इस जीवन में तो न भूल सकूँगा इन्द्रा।

कमल दीनू को बुला कर घर चलने की तैयारी करने को कह दिया। इन्द्रा का हँसता हुआ काल्पनिक संसार कुहरे से ढक गया। उसके सुकुमार हृदय को चोट लगी। वह लाचार थी!

[२]

इन्द्रा ने सामान आदि सहेजने में दीनू की काफी मदद की। कमल सबसे बिदा होकर रात में चल दिया। वह छज्जे पर खड़ी इन्द्रा को बिजली के प्रकाश में जब तक देख सका देखता गया। वह उसे अपने पास घसीटती सी प्रतीत हुई।

कमल ट्रेन में सवार होकर चल पड़ा। उसने ट्रेन में सीट पर जब बिस्तर खोला तो देखा तकिया पर, ऊपर ही रुमाल में बँधी एक पोटली। उसने पागल की तरह उसे जल्दी से खोल डाला। उसे ऊपर ही एक कागज का टुकड़ा मिला। उस पर लिखा था—"तुम मेरे बनाये पराठे खाना। मैं तुम्हें इस जीवन में भूल न सकूँगी।"

एक सुन्दर कहानी

भूल

लेखिका, कुमारी लावण्य बोस

उसके जीवन का अन्त हो गया। नहीं, उसने अपने जीवन का अन्त स्वयं अपने हाथों से कर दिया। यह उसने किया केवल अपनी एक 'भूल' को सही करने के लिए। सभी भूल करते हैं, किन्तु कुछ उन्हें सुधार लेते हैं, कुछ अपनी 'भूल' समझ ही नहीं पाते और कुछ अपनी 'भूल' को भूल जाते हैं। यही लोग सुखी रहते हैं। किन्तु वह अपनी 'भूल' को सुधार न सकी और न उसे भुला ही सकी। फिर वह कैसे सुखी होती ? उसने भूल की, क्योंकि, क्यों न वह पहले समझ सकी कि वह भूल कर रही है ? इसी का उसे पछ-तावा था। और कैसे सुधार ले वह अपनी 'भूल' को। यही चिन्ता उसे सिर उठाने तक न देती थी। प्रायः वह अपने मन में गुनगुना उठती—'अरे मन समझ समझ पग धरिये।' नेत्रों से अश्रु धारा बहती। उसने भूल से बिना देखे पैर बढ़ाया था और अब वह गर्त में गिर चुकी थी।

उस दिन सन्ध्या समय ऊषा ने उससे कहा था—'क्यों सन्ध्या क्या हाल चाल है ?'

उसने धीरे से उत्तर दिया—'क्यों अच्छी ही हूँ ऊषा। देखो न जीती जागती बैठी हूँ।'

ऊषा को अपनी संध्या में एक बड़ा परिवर्तन दिखाई पड़ता था। उसकी संध्या उदास सी प्रतीत होती थी। कली रूपी सन्ध्या कुछ मुरझा गई थी। ऐसा लगा मानो यह दो दिन पहले की सन्ध्या थी। ऊषा ने फिर पूछा—'क्यों सन्ध्या तुम उदास सी लग रही हो ?'

सन्ध्या ने हँसने का प्रयत्न किया। किन्तु ऊषा ने देखा कि वह बनावटी हँसी थी। उसने कहा—'कैसी बातें करती हो ऊषा ? मैं भला कब उदास हो सकती हूँ।'

ऊषा ने सन्ध्या को चिढ़ाते हुये कहा—'विपिन बाबू का क्या हाल है ? आज शायद अभी मिलने नहीं आये।'

सन्ध्या और भी उदास हो गई। बड़े बड़े नेत्र उठा कर वह कुछ देर तक ऊषा को देखती रही। फिर बोली—'ऊषा अब ऐसी बात फिर न कहना। बस आज तक यह बात ठीक थी, किन्तु अब नहीं।'

ऊषा चौंकी कि यह क्या ? सन्ध्या इससे पहले कभी बुरा नहीं मानती थी। वह उसे कितना परेशान करती थी किन्तु सन्ध्या सदा हँसती ही रहती थी। दोनों सहेलियाँ घंटों एक दूसरे को चिढ़ातीं, हँसती और न जाने कितनी बातें करतीं थीं। किन्तु आज यह परिवर्तन कैसा ?

सन्ध्या कहती ही गई—'वह एक जीवन की भूल थी। उसकी मुझे अब स्मरण न कराना ऊषा। इससे मुझे दुख होता है। जानती हो ऊषा, शायद तुम समझ न सको कि कलाकार कितना ही लापरवाही से कोई चित्र क्यों न बनाये, किन्तु यदि उसमें कुछ भूल हो जाती है और उसे मिटा देना पड़ता है, उस भूल को सही करना पड़ता है तो घड़ी भर के लिए उसका हृदय चूर चूर हो जाता है। कभी कभी वह झुँझला पड़ता है। पल भर के लिये वह संसार से बेजार हो जाता है। तूलिका पृथ्वी पर पटक देता है। क्यों न उसे दुख हो ? बनी बनाई चीज को उसे बिगाड़ना पड़ता है, और वह भी अपने ही हाथों से। मैंने भी जीवन में एक भूल की थी। उसको सुधारने जा रही हूँ, उसे मिटाने जा रही हूँ, नहीं उसका प्रायश्चित करने जाती हूँ। अब उसकी याद मत दिलाओ। देखूँ अपनी भूल को सुधार सकती हूँ या नहीं। उसका प्रायश्चित कर सकती हूँ या नहीं। अब तुम मुझे बार बार उसका स्मरण न कराना। टूटा हुआ दिल मेरा दुख से, अफसोस से पिघल जाता। समझी ?

ऊषा सन्ध्या की ओर देखती रही। उसकी सन्ध्या क्यों ऐसी हो गई वह यह भी पूछ न सकी। शिशु गिर पड़ता है, उसे चोट लगती है। माँ देख कर भी मुँह फेर लेती है और बच्चा हँस कर उठ खड़ा होता है। किन्तु यदि उसी समय माँ कहे—'अरे कितनी चोट लगी ?' तो वही शिशु रो पड़ता है।

फिर भी ऊषा ने साहस कर इतना कहा—'कलाकार का हृदय पल भर के लिये अवश्य टूट जाता है, किन्तु चित्र के सुधारते सुधारते वह उस दुख को भूल जाता है। और यदि वह चित्र नहीं सुधार सकता तो वह दूसरा बनाता है उतनी ही उमङ्ग से, उतनी ही खुशी से, नहीं शायद उससे भी ज्यादा। उसका मन फिर से प्रसन्न हो उठता है। वह दुख पता नहीं कहाँ गायब हो जाता है। किन्तु क्या तुम अपनी 'भूल' को सुधार कर फिर सुखी हो सकोगी? और यदि तुम उस 'भूल' को सुधार न सकी, उसे भूल न सकी तो क्या करोगी?'

सन्ध्या ने एक बार निराश हो कर आकाश की ओर देखा। उसके नेत्र सजल हो उठे। उसने ऊषा का हाथ पकड़ लिया और कहा—'तब क्या करूँगी, तभी मालूम कर लेना।'

छः महीना पश्चात ऊषा को एक पत्र मिला। पिता की बदली हो जाने के कारण ऊषा को सन्ध्या से बहुत दूर चला जाना पड़ा था। वह आगरे में थी। हाँ तो वह पत्र सन्ध्या का था। उसने लिखा था—

मेरी ऊषा रानी;

कालाकार अपनी भूल को घड़ी भर ही में भूल जाता है और वह दोबारा सुखी भी हो जाता है। किन्तु तूने ठीक कहा था। मैं अपनी 'भूल' को भूल न सकी। किन्तु मुझे इसके लिये दुख नहीं। तुमने पूछा था कि यदि भूल न सको तो क्या करोगी? उसी समय मैंने सोच लिया था कि क्या करूँगी—'अपनी भूल का प्रायश्चित।' तुमसे कहा भी था किन्तु तुम समझ न सकी थी कि मैं कैसे प्रायश्चित करूँगी। मेरी ऊषा एक बार मेरे यहाँ आ भर जा। उस दिन जिस बात को समझ न सकी थी उसे अपनी आखों से देख जा। मैं अपनी 'भूल' का प्रायश्चित करने जा रही हूँ। उसमें सफल होने जा रही हूँ। मुझे विजयी होते नहीं देखोगी। मैं चाहती हूँ कि कोई मुझे प्रायश्चित करते हुये देख ले। एक विनती मेरी मान लो। एक बार मेरे यहाँ आ भर जाओ।

ऊषा सन्ध्या के घर पहुँची। सन्ध्या ऊषा का हाथ पकड़ कर अपने कमरे में ले गई। उस समय वह कितनी प्रसन्न थी मानो सचमुच उसने रणक्षेत्र जीत लिया हो। वहाँ उसने एक काँच के गिलास में कुछ लिया। फिर एक बार ऊषा की ओर देख कर एक साँस में पी गई वह। उसने एक क्षण में वह भरा भराया गिलास खाली कर दिया। फिर बोली—'देखा ऊषा मैंने अपनी भूल का प्रायश्चित कर लिया। उस दिन तूने पूछा था कि यदि अपनी 'भूल' को भूल न सकी तो मैं क्या करूँगी। इस समय तूने अपनी ही आखों से देख लिया कि मैंने क्या किया।' ऊषा सन्ध्या से लिपट गई—'यह क्या किया सन्ध्या तुमने!'

सन्ध्या मुस्करा दी फिर कहने लगी—'जानती हो मुझे किसी बात के लिये दुख नहीं है। जीवन में आज ही के दिन मैं सबसे ज्यादा सुखी हो सकी हूँ। किन्तु मुझे एक बात के लिये दुख है, अफसोस है जिसके कारण चिता से भी आह निकलेगी कि मैं स्वयं क्यों अपनी 'भूल' समझ न सकी। तुम जानती थी, मैं जानती थी, नहीं सारा संसार जानता था कि हम दोनों एक दूसरे से प्रेम करते थे। मैं अब भी करती हूँ ऊषा। उस प्रेम को मैं भूल न सकी। लाख प्रयत्न करने पर भी मैं भूल न सकी। मैं हार गई और उसके लिये आज मुझे अपने ही हाथों से अपने जीवन का अन्त करना पड़ा। भूल मेरी ही नहीं थी वरन सारे जग की थी। सारा संसार सोचता था कि वह भी मुझे प्यार करते थे। किन्तु जब उस दिन उन्होंने कहा कि नहीं वह मुझसे प्रेम नहीं करते, मुझे प्यार नहीं करते और जो कुछ उन्होंने किया वह उनका केवल खेल भाव था। मैंने समझने में भूल की थी और यह भी उन्होंने कहा था कि यदि मैंने उनसे प्रेम किया तो यह मेरी 'भूल' थी। अब मुझे उस प्रेम को भूल जाना चाहिये। किये हुये भूल को सुधार लेना चाहिये। मैंने भूलने की चेष्टा की किन्तु हाय मैं भूल न सकी, मैं अपनी 'भूल' को सुधार न सकी। और इसीलिये मुझे आज प्रायश्चित करना पड़ा। बस इस 'भूल' का अन्त कर देने के लिये।

———

एक सामाजिक कहानी

दो वर्ष बाद

लेखिका, सौ० प्रकाशवती सिन्हा विशारद, बजाज बाड़ी वर्धा

[१]

बच्चे के रोने के साथ ही आवाज आई, 'क्या हुआ ?' 'लड़की' नर्स ने धीमे स्वर से उत्तर दिया।

बाहर खड़े उत्सुक जन समुदाय पर मुर्दनी छा गई। सबका उत्साह हर्ष और आशा न जाने कहाँ विलीन हो गई। यद्यपि सब अपने-अपने कार्य में लगे थे किन्तु विवशता स्पष्ट गोचर हो रही थी। किसी के शरीर में स्फूर्ति एवं मुख पर प्रसन्नता का चिह्न नहीं था। प्रसव समाचार पा मैं भी दौड़ी-दौड़ी आई, ताकि सबसे पहिले मैं ही बधाई दूँगी और मिठाई लूँगी, पर यह दृश्य देख काँप उठी।

मैं विचारने लगी कि प्रसवकाल के पूर्व परिवार एवं परिचित लोगों में इस शुभ अवसर के लिये कितनी प्रसन्नता और उत्सुकता थी। इस अवसर की प्रतीक्षा सब लोग कितनी आतुरता से करते थे। बात-बात पर परिवार वालों से तथा माता से परिचित लोग मिठाई खाने की तथा सेवक लोग इनाम पाने की बात याद दिलवाते रहते, ताकि शुभ अवसर आने पर वे लोग उनकी बात भूल न जायँ, किन्तु आज न कोई मिठाई खाने की इच्छा प्रकट कर रहा है न बधाई दे रहा है और न इनाम ही माँग रहा है। चारों तरफ स्तब्धता का साम्राज्य है। लोगों की चिन्ताजनक गम्भीरता देख मुझे बधाई देने तथा मिठाई माँगने का साहस ही नहीं हुआ। मैंने समझा, सम्भव है प्रसवकाल के पश्चात् माता या शिशु के प्रति कोई अशुभ घटना घटित हो गई है अतः लोगों का उत्साह भङ्ग हो गया और सब लोग चिन्ता सागर में डूब रहे हैं। मैं भी सहयोग की उत्कट अभिलाषा से बड़े आतुरता से प्रसव गृह में गई। माता तथा शिशु को शकुशल देख विस्मय में पड़ गई। हाँ, माता के मुख पर स्पष्ट उदासी की छाया दृष्टि गोचर हो रही थी पर कारण कुछ नहीं था। मैं इस विकट वातावरण की समस्या को सुलझाती हुई चली पर वह उलझती ही गई। सम्भव है मेरे कमजोर मस्तिष्क में इस कठिन मूख परिस्थिति के समझने की क्षमता ही नहीं थी। कुछ दिन बाद मैं इस घटना को भूल गई।

[२]

दिन के बाद मास और मास के बाद वर्ष व्यतीत हो गये। आज फिर उसी सूतिका गृह में चहल-पहल मची हुई है। बच्चे के रोने के साथ ही 'लड़का हुआ' 'लड़का हुआ' की ध्वनि गूँज उठी। बाहर खड़ी उत्सुक जन मण्डली हर्षित हो उठी। लोग कार्य के लिये इधर उधर दौड़ पड़े। कोई बाजे वाले के यहाँ दौड़ा तो कोई पेड़े के लिये। बाजे बजने लगे और और पेड़े बटने लगे। परिचित लोग बधाई पर बधाई देते। सेवक इनाम माँगते चारो तरफ हर्ष और उत्साह का साम्राज्य दिखलाई देता।

उसी दिन रमेश दीपमालिका की छुट्टियों में घर आया। यह धूम-धाम देख कर आश्चर्य से (छोटी बहिन) रमा से पूछने लगा। 'क्या मामला है रमा ?' 'भाभी के लड़का हुआ है, अब मैं तुमसे हार और भाभी से अँगूठी लूँगी समझे भैया।' रमा ने प्रफुल्लता से उत्तर दिया। 'समझा' रमेश ने मुस्करा के कहा। सरोज रमा की छोटी बहिन रमेश को देख, भैया आ गये भैया आ गये कहती हुई रमेश के पास दौड़ी आई। रमा को इनाम माँगती देख सोचने लगी, 'मैं क्या मागूँ ?' उसके बुद्धि में हार और अँगूठी से बढ़िया दूसरी वस्तु न आई और समय बीता जा रहा था. अतः वह शीघ्रता से बोल उठी—'मुझे क्या दोगे भैया ?' रमेश घर की ओर जाते हुये, दोनों को एक-एक चपत मारते हुये कहा—'अभी तो यह लो फिर की फिर—'

'दीदी भैया से किस बात का इनाम माँग रही थी ?' सरोज ने उत्सुकता से पूछा ? 'भाभी के लड़का हुआ है इसका और काहे का ?' रमा ने गर्व से उत्तर दिया। 'इन्दू के होने पर तो किसी को इनाम नहीं मिला था।' सरोज ने भोलेपन से पूछा। 'तू तो पागल इतना भी नहीं समझती कि इन्दू तो लड़की है।'

'तो लड़की के होने पर इनाम नहीं मिलता।' सरोज ने साहस से पूछा। इस क्यों का उत्तर शायद रमा भी नहीं दे सकती थी किन्तु अपनी बुद्धिमानी की धाक जमाय रखने के लिये चिढ़ कर बोली, 'तू तो ठहरी निरी मूर्ख तुझसे कौन माथा पच्ची करे।'

छत पर बैठी मैं अध्ययन करने की विफल चेष्टा कर रही थी, यह वार्तालाप छत को पार करता हुआ मुझ तक

पहुँच रहा था। मेरे हृदय में आघात् पहुँचा। कई प्रकार के विचार उदय और अस्त होने लगे। अपने और इन्दू की जन्म घटना सजीव हो उठी। मैं सोचती क्या मेरे जन्म काल में भी इसी प्रकार उदासी छा गई होगी। क्या लड़की का जन्म अभाग्य और लड़के का जन्म भाग्य का चिह्न है। क्या स्त्री जाति समाज में उपेक्षिता समझी जाती हैं। क्या माता स्त्री होकर भी लड़की से घृणा करती है। तभी तो इन्दू के समय इन्दू की माता ऐसी मालूम होती थी मानो सर्वस्व लूट गया हो और आज प्रफुल्लिता का क्या कहना है मानो संसार की निधि पा गई हैं। देव! भला तूने स्त्री जाति की सृष्टि ही क्यो की, क्यों नहीं पुरुषों को ही केवल पुरुष प्रसव करने की शक्ति प्रदान की। भला स्त्री जाति को क्यों कष्ट भोगने और उपेक्षिता रहने के लिये जन्म दिया! स्त्री-पुरुषों की समता की दुहाई देने वाले लोगों का जब यह हाल है तो सर्वसाधारण की बात ही क्या है?

सामने की ओर नजर उठाई तो एक बिल्ली और गाय को अपने नर मादा बच्चों को बड़े स्नेह से चाटते और दुलार करते देखा। मैं बहुत देर तक उनके स्नेह पूर्ण कौतुक देखती रही। उनके स्नेह में भेद-भाव खोजने की बड़ी चेष्टा की पर यहाँ वह चीज कहाँ?

'दस बज गये, क्यों सोच रही हो, क्या पुस्तकों का अध्ययन छोड़ पशुओं का अध्ययन कर रही हो।' मंजू ने मुझे हिलाते हुये कहा—'ठीक कहती हो मजू अभी मैं यही सोच रही थी कि मनुष्य समाज जो अपने को सभ्यता के शिखर पर चढ़ा हुआ समझता है, सन्तान स्नेह में पशुओं से पीछे है। उसे सन्तान का भेद-भाव रहित सच्चा स्नेह पशुओं से सीखना चाहिये।' मैंने आर्द्र स्वर में कहा—'दीदी तुम्हारी रहस्यमयी बात मैं न समझ सकी।' मंजू ने आश्चर्य से मेरी ओर देखते हुये कहा। 'मेरी भोली मंजू तुम अभी इस रहस्य को कैसे समझोगी? मैं ही इन्दू के दो वर्ष बाद इस पहेली को सुलझा सकी हूँ।' मैंने पुस्तक बन्द करते हुये कहा 'मुझे भी इस रहस्यमयी पहेली को बतला दो दीदी।' मंजू ने आग्रह से कहा—'पगली इसे रहस्य ही रहने दो जान कर दुख होगा। समय स्वयं बतला देगा', यह कहते हुये मैं खड़ी हो गई।

——

बाल साहित्य

चुटकुला

"छोकरे तूने दोनों खत डाक में डाल दिये?"

"हाँ साहब और यह लो अपने छः पैसे और यह रजिष्ट्री की रसीद।"

"यह छः पैसे कैसे लाया रे?"

"रजिष्ट्री करा के मैं चुपचाप खड़ा रहा जब देखा कोई नहीं देखता तब चुपके से वह बम्बे में डाल दिया। रसीद तो लानी नहीं थी पैसे क्यों बिगाड़ता।" —क० शिवपुरी

इन्नू बाबू

देखो इन्नू बाबू आये।
आखों में काजल फैलाये।
मिट्टी पानी कीचड़ खेला, कुरता कैसा गंदा मैला।
अम्मा ने जो डाट बताई, खड़े हुये हैं मुँह लटकाये।
दूध देखते खुश हो जाते, मीठा ना हो तो चिल्लाते।
चीख पड़ेंगे डर जायेंगे, अगर कहीं बन्दर दिख जाये।
रङ्ग बिरङ्गी पुस्तक लाकर, पढ़ने बैठे ध्यान लगा कर।
ऐ बी छी दी कहते धीरे, माँ ने जो देखा शरमाये।
लकड़ी का छोटा सा घोड़ा, कमरे भर में उसको दौड़ा।
सारे दिन करते शैतानी, अम्मा को होती हैरानी।
लेकिन इनकी तुतली बोली, सुन, माँ का जी खुश हो जाये।

—सुशान्ता कुमारी सिनहा

नई पहेलियाँ

(१)

पहले था वह मर्द, मर्द से नार कहाया।
कर गंगा स्नान, मैल सब धोय बहाया॥
सप्त समुन्दर तैर, घाव बरछी का खाया।
बाहर आया फिर, मर्द का मर्द कहाया॥

(२)

आठ पहर चौंसठ घड़ी।
ठाकुर पर ठकुरानी चढ़ी॥

—भानुमती देवी

उत्तर—(१) मूँग से दाल, दाल से पीठी, पीठी से बड़ा। (२) शालि ग्राम जी पर तुलसी।

महिला मण्डल

गत फरवरी मास के अंतिम सप्ताह में महिला मण्डल उदयपुर का वार्षिकोत्सव मनाया गया।

श्रीमती विजयालक्ष्मी जी नागर की अध्यक्षता में २६ फरवरी को कमलिया बाड़ी में महिलाओं की भारी उपस्थिति में वन्देमातरम् गान के साथ टूर्नामेन्ट हुआ।

ता० २७ को दोपहर में श्रीमती राधादेवी जी गोइनका की अध्यक्षता में महिला सम्मेलन हुआ। श्रीमती गोइनका के नेतृत्व में पर्दा विरोधी जुलूस निकला। जुलूस में बहिनों के हाथों में पर्दा विरोधी सुन्दर वाक्यों के पोस्टर्स थे।

श्रीमती राधादेवी गोइनका के नेतृत्व में पर्दा विरोधी जुलूस का एक दृश्य

नारे लगाता हुआ और गायन गाता हुआ यह जुलूस शहर की मुख्य मुख्य सड़कों पर होकर वापस पंडाल में आ ठहरा। मार्ग में कई स्थानों पर जुलूस का पान इलायची और पुष्पहारों से स्वागत हुआ।

वार्षिकोत्सव के दूसरे दिन का कार्यक्रम उदयश्यामजी के मन्दिर के घाट पर तैराकी प्रतियोगिता से श्रीमती रुक्मा बाई तैवलीजी की अध्यक्षता में हुआ। दर्जनों महिलाओं ने तैराकी में भाग लिया।

अंतिम दिन की कार्यवाही डाक्टर मोहनसिंहजी साहेब मेहता रेवेन्यु मिनिस्टर की अध्यक्षता में आरम्भ हुई। टूर्नामेन्ट, तैराकी प्रतियोगिता, और वादविवाद में श्रेष्ठ आने वाली बहिनों को कप्स, मेडल्स एवम् अन्य वस्तुओं के रूप में ६० इनाम दिये गये। मिसेज विंडसन बेडमिन्टन में, मिस कृष्णा टेनीक्वाइट में सर्वश्रेष्ठ रहीं। समन्दबाई तैरने में जनरल चैम्पियन शीप में और श्री सुशीला वादविवाद में सर्व श्रेष्ठ रही। सभापति के सार गर्भित भाषण के बाद मंडल के व्यवस्थापक श्री दयाशङ्कर श्रोत्रिय ने धन्यवाद दिया। अंत में वन्देमातरम् गान से उत्सव की समाप्ति हुई। श्रीमती गोइनका के सम्मान में डाक्टर मेहता और सेठ मेरुलालजी गेलडा ने भोज दिया। महिला मंडल ने गार्डन पार्टी और वैद्य यमुना लालजी ने चाय पार्टी भी दी।

पायरिया का मञ्जन

'दीदी' की एक पठिका ने अपने दाँतों में पायरिया हो जाने की शिकायत लिख भेजी है। मैं उसके लिये एक मंजन भेज रही हूँ। वह यह है—

तम्बाकू खाने की पत्तीदार २ तोला जला कर राख कर लो—उसमें भुनी हुई फिटकरी एक तोला और सेंधा नमक आधा तोला मिला कर बारीक पीस कर रख ले। सुबह शाम मलें। —तारा श्रीवास्तव बिजनौर

चौकलेट की रीति

चौकलेट बनाने की रीति जो फरवरी में छपी थी ठीक न थी, बर्फी भले बन जाय चौकलेट बगैर कोको के नहीं बनेगी, न रङ्ग आवेगा। जो नुसखे बहने भेजा करें पहले स्वयं उन्हें करके देख लिया करें। — कमला शिवपुरी

सूचनाएँ

'बरनवाल वैश्य महासभा'

ता० ७-८-९ अप्रैल १९४४ ई० को श्री अखिल भारत वर्षीय बरनवाल वैश्य महासभा का २५वाँ अधिवेशन महाराजगञ्ज (जिला सारन) में होने जा रहा है।

—गोपालजी बरनवाल, मंत्री स्वागत समिति

५ नकार

१ – बीमार बच्चे को हँसाने की चेष्टा मत करो उसे पूर्ण आराम करने दो। इस प्रकार वह जल्दी अच्छा होगा। हँसने में भी बच्चे की ताकत खर्च होती है। यह ताकत रोग से लड़ने में खर्च होने दो।

२—भोजन करते समय बच्चे को मत डाँटो। इससे उसका हाज्मा बिगड़ जायगा।

३—अपने प्यारे बच्चे के अवगुणों की चर्चा मत करो। उस चर्चा से उसके मन में कोई उत्साह न पैदा होगा। उसके छोटे से छोटे सुन्दर काम की भी प्रशंसा करो। इससे वह सब गुण सम्पन्न बन जायगा।

४—बच्चे को बहुत मीठा मत खिलाओ। इससे उसका हाजमा बिगड़ेगा। यदि मीठा देना ही हो तो मीठे फलों का रस दो। कभी कभी जरा सा शहद दो।

५ – बच्चे को बदन से कसे हुए कपड़े मत पहनाओ। इससे उसके शरीर में रक्त का दौरा ठीक ठीक न हो सकेगा। बच्चे के कपड़े सदैव ढीले ढाले होने चाहिए।

शिशु का स्नान

प्रश्न—आप कहते हैं, बच्चे को रोज नहलाना चाहिए। परन्तु मैं जभी नहलाती हूँ बच्चे को जुकाम हो जाता है। ऐसा क्यों होता है?

उत्तर इसका मुख्य कारण नहलाने में असावधानी है। बच्चे को देर तक मत नहलावें। अधिक से अधिक पाँच मिनट में उसका स्नान खतम हो जाय। स्नान के बाद तुरन्त ही उसका बदन सूखे और साफ मुलायम तौलिए से पोंछें और उसे गर्म कपड़े पहना दें। स्नान के बाद बदन खुला रह जायगा या बदन में पानी लगा रह जायगा तो जुकाम हो जा सकता है।

ग्राहकों से निवेदन है कि वे पत्र लिखते समय अपना ग्राहक नम्बर जरूर लिखा करें ताकि उनकी आज्ञाओं का तुरन्त पालन हो सके।

—संचालिका

इस मास में हमें नीचे लिखी नई पुस्तकें प्राप्त हुई हैं। स्थानाभाव के कारण हम सभी की समालोचना नहीं कर सकते परन्तु कुछ का जिक्र हम आगामी अङ्कों में करेंगे।

जीवन संग्राम—लेखक श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति मूल्य २) पता—विजय पुस्तक भण्डार देहली।

जापानी खतरा—लेखक कुँअर सुरेशसिंह कालाकांकर मूल्य ।=)

चित्र कर्त्री—लेखक श्री उल्लास चन्द्र मूल्य ।।=)

वर्ण बोध—लेखिका श्रीमती सुशीला देवी मूल्य -) पता—प्रकाश पुस्तकालय जमशेदपुर।

आरती मन्दिर पटना सिटी की पुस्तकें:—

स्मृति तीर्थ—लेखक श्री पुजारी मूल्य ।।।)

गाथा—लेखक श्री जानकी बल्लभ शास्त्री मूल्य ।।।)

मौत की जिन्दगी—लेखक श्रीप्रफुल्लचन्द्र ओझा १।)

हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन्स इलाहाबाद

हृदय का कोना—(उपन्यास) लेखक श्री अनन्त प्रसाद विद्यार्थी बी० ए० मूल्य १।।)

अंगारे—(कहानी संग्रह) मूल्य १।।)

पत्र पत्रिकाएँ

कुमार—(बालकोपयोगी) सम्पादक राजमल लोढ़ा वार्षिक मूल्य ४) पता—कुमार कार्यालय मन्दसौर मालवा।

विनोद—(बालकोपयोगी) संपादक श्री शिवनन्दन शर्मा वार्षिक मूल्य २।।) पता—हिन्दी प्रेस, इलाहाबाद।

श्रीयुत स्वराज्य प्रसाद त्रिवेदी बी० ए० मध्य प्रान्त के नवयुवक कवियों में प्रमुख हैं। यह हर्ष की बात है कि ऐसे श्रेष्ठ कवि का सहयोग 'दीदी' को खास तौर से प्राप्त है। अन्यत्र उनकी एक सुन्दर कविता प्रकाशित की जा रही है।

* * * *

काला कांकर के कुँअर सुरेशसिंह जी हिन्दी के प्रतिभाशाली लेखक हैं। इनकी जैसी सजीव वर्णनशैली शायद ही किसी की हो। न कुछ बात में ये चमत्कार पैदा कर देते हैं। इस अङ्क में अन्यत्र प्रकाशित इनकी असली मुर्गा छाप कहानी पढ़िए।

* * * *

श्रीमती रानी लक्ष्मीकुमारी रावतसर द्वारा संग्रहीत डिंगल के कुछ श्रेष्ठ दोहे हम 'दीदी के पिछले अङ्क में छाप चुके हैं। इस अङ्क में अन्यत्र कुछ और दोहे दिए जा रहे हैं।

* * * *

श्रीमती श्यामा बाई का कहना है कि प्रत्येक स्त्री यदि चाहे तो थोड़े परिश्रम से स्वस्थ और सुन्दर बन सकती है। इस अङ्क में 'यौवन सौंदर्य और प्रेम' नामक स्तम्भ में उनका एक लेख छपा है जिसमें उन्होंने कुछ व्यायाम बताएँ हैं। ये व्यायाम बहुत हीसरल हैं। पाठिकाओं को इन्हें आजमाना चाहिए।

* * * *

कुछ बहनें ठीक समय पर 'दीदी' न मिलने की शिकायत करती हैं। वे कहती हैं हमारे कार्यालय में गड़बड़ी है। हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि हमारे कार्यालय में कोई गड़बड़ी नहीं है। हम बड़ी सावधानी के साथ दो बार जाँच करके अङ्क भेजते हैं। अतएव यदि कोई अङ्क उन्हें निश्चित समय पर न मिले तो तुरन्त डाक घर वालों से पूछताछ करनी चाहिए और कार्यालय को भी सूचित करना चाहिए।

* * * *

पृष्ठ संख्या न्यूनतम होने के कारण सभी रचनाओं को, जो हमारी लेखिकाएँ और लेखक भेजते हैं, 'दीदी' में प्रकाशित नहीं कर पाते। इसका हमें बराबर दुःख रहता है परन्तु सीमा के अन्दर ही तो हम सब कुछ कर सकते हैं। अतएव यदि आपने कोई रचना भेजी और वह 'दीदी' में न छप सकी तो कृपापूर्वक नाराज न हों। परिस्थिति को खयाल करके हमें क्षमा करें।

दीदी का बङ्गाल सहायता कोष

दीदी का बङ्गाल सहायता कोष अब बन्द कर दिया गया है। पाठिकाओं से निवेदन है कि अब इस मद में वे कोई धन न भेजें। इस मद में अब तक १३११।-) प्राप्त हो चुका है। इसमें ५) श्री वृज के सिंहल, बरेली। ५) श्री राजेन्द्र दत्त शर्मा मारफत पण्डित मुनीन्द्रदत्त शर्मा बी० ए० गोलागोकरननाथ और २) श्री सोहनकुमारी भल्ला, लाहौर का भी शामिल है।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन

हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जयपूर अधिवेशन के सभापति का चुनाव हो चुका है। उस चुनाव को रद्द करके स्थायी समिति फिर से चुनाव कराने जा रही है। इसके लिए उसने कुछ नियम भी बनाए हैं। यह सर्वथा अनियमित कार्यवाही है। नियमावली के अनुसार हो चुके चुनाव को रद्द करने और नियमावली में संशोधन करके पुनः चुनाव कराने का अधिकार स्थायी-समिति को नहीं है। ऐसी स्थिति में जो भी चुनाव होगा वह अवैध समझा जायगा और आगामी अधिवेशन में उपस्थित प्रतिनिधि गण बहुमत से जो तय करेंगे वही वैध समझा जायगा। अतएव प्रत्येक सम्मानित व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि वह इस अनियमित ढङ्ग से होने वाले चुनाव में अपना नाम पेश न होने दे जैसा कि प्रो० इन्द्र ने किया है। क्योंकि यह प्रश्न जयपूर में उठाया जायगा और इस अवैध ढङ्ग से चुना गया व्यक्ति सभापति के आसन पर कदापि नहीं बैठने पावेगा ?

चूँकि मैं भी इस दुबारा होने वाले चुनाव को अवैध मानता हूँ इसलिए मैं उन लोगों का साथ दूँगा जो मेरी तरह इस चुनाव को अवैध मानते हैं और जयपूर के अधिवेशन में इस प्रश्न को उठावेंगे और उपयुक्त नाम का प्रस्ताव करेंगे। हम लोग उसी को सभापति मानेंगे जो खुले अधिवेशन में बहुमत से चुनाजायगा।

—श्रीनाथसिंह

नारी जाति की
विजय
BHASKAR.43.
KKCo.

लिपटन की चाय पीते पीते असावधानी से बातें न कीजिये !

अजन्ता-गुहाकी दीवारों पर रेखा व रंगके मिश्रणसे शिल्पी ने जो सर्वांग-सुन्दर मूर्तियाँ बना छोड़ी हैं उनके सौन्दर्य में कहीं जरा सा भी नुक्स नहीं है। अपने दैनिक जीवन में भी सुस्वादु, सुगंधित चाय पीने पिलाने में आप एक परिपूर्ण सौन्दर्य का उपभोग करती हैं। सार्थक शिल्प की तरह ही चाय समस्त शक्तियों को जगा देती है और मन खुशी से भर जाता है। आप परिवार के प्रियजनों के साथ प्रतिदिन आनन्ददायक चाय से अपने सामयिक अवकाश को सार्थक कर लीजिये। देखियेगा महान् शिल्प-उपभोग की तरह हो चाय गहरी तृप्तिसे आपका हृदय भर देंगी।

चाय तैयार करने का तरीका: ताजा पानी खौलाइये। साफ बर्तन जरा गर्म कर लीजिये। उसमें प्रत्येक के लिये एक और एक चम्मच अधिक, बढ़िया भारतीय चाय रखिये। पानी खौल जाते ही चाय पर डाल दीजिये। पांच मिनिटों तक चायको सीझने दीजिये। इसके बाद प्यालों में डाल कर दूध और चीनी मिलाइये।
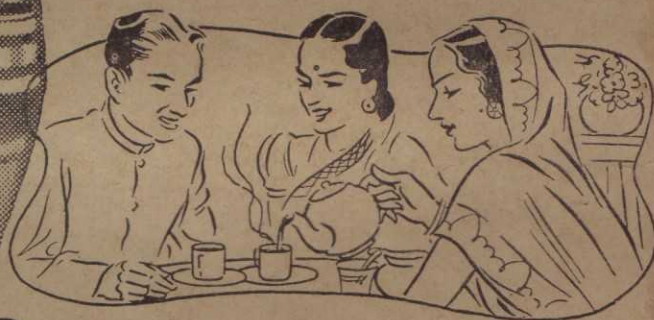
भारतीय चाय

एकमात्र पारिवारिक पे

इण्डियन टी मार्केट एक्सपैन्शन बोर्

ublished by Shrinath Singh at the Didi Press .Katra, Allahab